महर्षि दयानन्द सरस्वती की
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा
का मुख पत्र

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।

वर्ष : ६१ **अंक** : २१
दयानन्दाब्दः १९५
विक्रम संवत्: कार्तिक शुक्ल २०७६
कलि संवत्: ५१२०
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,१२०

सम्पादक
डॉ. सुरेन्द्र कुमार

प्रकाशक- परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-मन्त्री, परोपकारिणी सभा
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

परोपकारी का शुल्क
भारत में
एक वर्ष-३०० रु.
पाँच वर्ष-१२०० रु.
आजीवन -३००० रु.
एक प्रति - १५/- रु.
विदेश में
वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर
द्विवार्षिक-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर
त्रिवार्षिक-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर
आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.
एक प्रति - ३ पाउण्ड
एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

RNI. No. ३९५९ / ५९

i jki dkjh

नवम्बर प्रथम २०१९

अनुक्रम

०१. क्या आर्यसमाज को राजनीति में...	सम्पादकीय	०४
०२. मृत्यु सूक्त-४०	डॉ. धर्मवीर	०८
०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	११
०४. निडर शास्त्रार्थ महारथी...	कन्हैयालाल आर्य	१६
०५. जिनके हम ऋणी हैं: रघुनाथ प्रसाद कोतवाल		२०
०६. संस्था की ओर से...		२२
०७. १३६ वाँ ऋषि बलिदान समारोह		२५
०८. वेदगोष्ठी-२०१९		२६
०९. ऋषि मेला कार्यक्रम		२८
१०. वेद में स्त्रियों की स्थिति	पं. यशःपाल	२९
११. गुरुकुल की ओर से	ब्रह्मचारी मोहित	३२

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ
www.paropkarinisabha.com→gallery→videos

'परोपकारी' पत्रिका में प्रकाशित सभी आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के निजी हैं। इन्हें सम्पादकीय नीति नहीं समझा जाये।
किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

क्या आर्यसमाज को राजनीति में भाग लेना चाहिए?

आर्य विद्वानों और आर्यजनों में यह प्रश्न समय-समय पर चर्चा का विषय बनता रहता है कि आर्यसमाज को सक्रिय राजनीति में भाग लेना चाहिए अथवा नहीं? राजनीति सम्बन्धी चर्चा के अवसर पर प्राय: एक इसी प्रश्न पर विचार किया जाता है जबकि पूर्व समाधान के लिए कम से कम तीन मूलभूत आवश्यक प्रश्नों पर एक साथ विचार किया जाना चाहिए। वे तीन प्रश्न हैं-

१. क्या आर्यसमाज को राजनीति में भाग लेना चाहिए?

२. राजनीति में भाग लेने का अधिकार किसको है?

३. आर्यसमाज की राजनीति का सैद्धान्तिक आधार क्या हो?

इन तीन प्रश्नों पर आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती के उल्लेखों-निदेर्शों के आधार पर विचार किया जाता है। इस विषय में महर्षि दयानन्द के मन्तव्य इस प्रकार हैं-

१. क्या आर्यसमाज को राजनीति में भाग लेना चाहिए?

(अ) वैदिक धर्म, संस्कृति-सभ्यता की आधारभूत व्यवस्था **वर्णाश्रम व्यवस्था** है। वही आर्यसमाज की सिद्धान्त रूप से स्वीकृत व्यवस्था है। वर्तमान समय में संविधान में इस व्यवस्था के अप्रभावी होने के बाद भी आर्यसमाज सैद्धान्तिक दृष्टि से इसी व्यवस्था को प्रचारित करता है, इसको अपना लक्ष्य घोषित करता है। महर्षि दयानन्द और उनके अनुयायी आर्यसमाज की इस व्यवस्था के प्रति प्रतिबद्धता है। वर्णाश्रम व्यवस्था में चार वर्णों में से क्षत्रिय वर्ण पूर्णत: राजनीति के लिए है और राजनीति क्षत्रिय वर्ण के लिए है। वैदिक या आर्य राजनीति में प्रजापालन अर्थात् शासन-प्रशासन, न्यायविभाग और सैन्यविभाग निहित हैं। इसी व्यवस्था का प्रतिपादन महर्षि दयानन्द ने अपने अमरग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश तथा अन्य ग्रन्थों और वेदभाष्य में आर्यों के लिए किया है। अत: नि:सन्देह आर्यसमाज को राजनीति में भाग लेना चाहिए।

(आ) इसी प्रकार वैदिक अथवा आर्य शिक्षापद्धति में **धनुर्वेद** नामक एक उपवेद शाखाओं सहित राजनीति के लिए विहित है। उस उपवेद के अध्ययन के बिना न तो वैदिक या ऋषिप्रोक्त आर्ष शिक्षा-पद्धति पूर्ण होती है न क्षत्रिय वर्ण के लिए विहित शिक्षा। उसकी पूर्णता तभी होगी जब राजनीति की पुस्तकीय और क्रियात्मक शिक्षा प्राप्त करके वह व्यवहार रूप में आचरित की जायेगी। इस सबके बिना शिक्षा प्रक्रिया अधूरी रहेगी, अत: आर्यसमाज को राजनीति में भाग लेना चाहिए।

(इ) जो लोग यह कहते हैं कि आर्यसमाज केवल धार्मिक संस्था है, वे गलत हैं। आर्यसमाज एक सम्पूर्ण सामाजिक संस्था है जिसके लक्ष्य धार्मिक, राजनीतिक, व्यापारिक, वैज्ञानिक, आध्यात्मिक, भौतिक, सर्वतोमुखी सभी हैं। वर्णाश्रम व्यवस्था के अन्तर्गत आने वाले सभी कार्यक्रम आर्यसमाज के हैं। उनके पालन के बिना आर्यसमाज का लक्ष्य अपूर्ण है। आर्यसमाज की सीमित गतिविधियों के कारण और आर्यसमाज को सम्पूर्णता से समझे बिना उसके विषय में यह भ्रान्त धारणा बन गयी है कि आर्यसमाज केवल धार्मिक संस्था है।

(ई) जैसा कि पूर्व बतलाया गया है, वैदिक राजनीति-व्यवस्था के प्रमुख चार अंग हैं- १. शासन, २. प्रशासन, ३. न्याय, ४. सैन्य। जब आर्यजन बाद के तीनों अंगों में बिना किसी हिचकिचाहट के भाग ले रहे हैं और न कोई उनमें भागीदारी का निषेध करता है। फिर 'शासन' नामक अंग में भागीदारी का निषेध क्यों हो? वैदिक राजनीति ऋषि-प्रोक्त आदेशों की पूर्ण अनुपालना तभी मानी जा सकती है जब आर्यसमाज शासकीय राजनीति में भी भाग ले, उसका अपना शासन हो।

(उ) महर्षि दयानन्द ने अपने ग्रन्थों में राज्य-व्यवस्था के सभी अंगों में भागीदार होने के लिए आर्यों को स्पष्ट निर्देश दिये हैं। दर्जनों स्थलों पर उन्होंने चक्रवर्ती राजा बनने तक की प्रेरणा दी है। उदाहरण के रूप में यहाँ कुछ

उद्धरण प्रस्तुत करते हैं-

(क) ऋग्वेद में ईश्वरोक्त वचन है-''अहं भूमिम्-अद्दाम-आर्याय= मैंने तो यह भूमि आर्यों के लिए प्रदान की है (४.२६.२)। आर्य न ले सकें तो इसमें ईश्वर का क्या दोष है?''

(ख) ''पूर्ण राजनीति को धारण करके माण्डलिक अथवा सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य करें...हम प्रजापति अर्थात् परमेश्वर की प्रजा और परमात्मा हमारा राजा, हम उसके किंकर भृत्यवत् हैं। वह कृपा करके अपनी सृष्टि में हमको राज्याधिकारी करे और हमारे हाथ से अपने सत्य न्याय की प्रवृत्ति करावे।'' (सत्यार्थप्रकाश ६ समुल्लास)

(ग) ''हे परमेश्वर! आपके अनुग्रह से हम लोग चक्रवर्ती राज्य और शूरवीर पुरुषों की सेना से युक्त हों।'' (ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, ईश्वरस्तुति. विषय)

(ऊ) ऐसे सैंकड़ों कथन हैं जिनमें महर्षि ने आर्यों को राजनीति में भाग लेने का निर्देश-आदेश दिया है। महर्षि ने अपने उन मन्तव्यों को 'इतिहास-प्रमाण' से पुष्ट भी किया है। आर्यों के राज्याधिकार की पुष्टि में महर्षि ने अनेक आर्य चक्रवर्ती राजाओं का नामोल्लेख, राजवंशों का इतिहास, आर्य राजवंशावलियाँ 'सत्यार्थप्रकाश' आदि में दी हैं। महर्षि ने स्पष्ट लिखा है-

(क) ''वेदादि शास्त्रों की रीति से आर्यों ने भूगोल में करोड़ों-वर्ष राज्य किया है, इसमें कुछ सन्देह नहीं।'' (ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, राज.)

(ख) ''सृष्टि से लेके पाँच सहस्र वर्षों से पूर्व समय पर्यन्त आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती अर्थात् भूगोल में सर्वोपरि एकमात्र राज्य था।'' (सत्यार्थप्रकाश ११ समु.)

इन सबका उल्लेख करने का यही अभिप्राय है कि आर्यजन अपने प्राचीन गौरवमय इतिहास को याद करें और वैदिक धर्म के पुनरुद्धार तथा पुनः स्थापन के साथ वैदिक राज्य एवं राजनीति की भी पुनः स्थापना हो, फिर से 'राजार्यसभा' बनें। उसके लिए आवश्यक है कि आर्यसमाज को राजनीति में भाग लेना चाहिये।

२. राजनीति में भाग लेने का अधिकार किसको है?

आर्यसमाज को राजनीति में भाग लेना चाहिए, यह निश्चय हो जाने के बाद इससे जुड़ा दूसरा प्रश्न है कि उसमें भाग लेने का अधिकार किसको है? महर्षि के आदेशों की अनुपालना सही ढंग से हो और आर्यसमाज की व्यवस्था-मर्यादा भंग न हो, इसके लिए आवश्यक है कि महर्षि विहित राजनीति सम्बन्धी व्यवस्थाओं का सत्यनिष्ठा और निःस्वार्थभाव से पालन किया जाये, क्योंकि हम महर्षि द्वारा स्थापित आर्यसमाज के अंग हैं।

(अ) वैदिक व्यवस्था अथवा महर्षि-विहित आर्यसमाज की राजनीतिक व्यवस्था के अनुसार, सक्रिय राजनीति में केवल गृहस्थ को ही भाग लेना चाहिए। संन्यासी, वानप्रस्थ और ब्रह्मचारी को नहीं। महर्षि दयानन्द ने बहुत स्पष्ट शब्दों में यह सिद्धान्त प्रस्तुत किया है। वे लिखते हैं-

''इस राज्य व्यवहार में गृहस्थ को छोड़ किसी ब्रह्मचारी, वनस्थ, वा यति की प्रवृत्ति होने योग्य नहीं है।'' (ऋग्वेदभाष्य १.१६०.११, भावार्थ)

गृहस्थ के अतिरिक्त किसी अन्य के सक्रिय राजनीति में भाग न लेने के अनेक तर्कसंगत कारण हैं। ब्रह्मचारी का लक्ष्य केवल विद्याप्राप्ति और तन-मन के बल का अर्जन करना होता है। वानप्रस्थ और संन्यासी का कर्त्तव्य है सांसारिक एषणा-रहित होकर साधनासिद्धि, लोकोपकार, वेदादि विद्या एवं धर्म-प्रचार तथा ईश्वर-प्राप्ति करना। सांसारिक कर्त्तव्य केवल गृहस्थ के लिए ही विहित हैं। जो लोग वानप्रस्थ और संन्यासी होकर गृहस्थ के कर्त्तव्य कर्मों में संलग्न रहते हैं वे आश्रम संकरता उत्पन्न करते हैं, ऋषि-विहित मर्यादा का उल्लंघन करते हैं।

(आ) गृहस्थ की भी एक परिभाषा और अवधि निर्धारित है। आजकल के राजनीति-व्यवसायियों के समान मृत्युपर्यन्त राजनीति से चिपटे रहना वैदिक व्यवस्था के अनुकूल नहीं है। वैदिक व्यवस्था में विवाहोपरान्त पचास वर्ष की आयु होने के बाद जब चेहरे पर झुर्रियाँ और सिर के केश श्वेत होने लगें तब तक या पुत्रादि को पुत्र-प्राप्ति तक गृहस्थ में रहने का समय है। उसके बाद उसके लिये वानप्रस्थ धारण करने की व्यवस्था है। यह समझिये कि वैदिक व्यवस्था में गृहस्थ-विषयक प्रत्येक सांसारिक क्रियाकलाप से निवृत्त हो जाना, उक्त आश्रम की अन्तिम सीमा है, जैसे आजकल प्रशासन में भी सेवानिवृत्ति की

निर्धारित आयु होती है। वैदिक या आर्यसमाज की व्यवस्था के अनुसार जैसे ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ और संन्यासी का राजनीति में अधिकार नहीं बनता उसी प्रकार निर्धारित अवस्था से अधिक समय तक गृहस्थाश्रम में बने रहने वाले गृहस्थ का भी राजनीति में अधिकार नहीं बनता। सम्प्रति वर्णव्यवस्था कानूनी व्यवहार में लागू न होने कारण क्षत्रिय वर्ण का नियम लागू करना सम्भव नहीं है, किन्तु दूसरे नियम को ईमानदारी से लागू किया जा सकता है कि केवल गृहस्थ ही राजनीति में भाग लें, अन्य आश्रमी नहीं।

३. आर्यसमाज की राजनीति का सैद्धान्तिक आधार क्या हो?

पूर्व प्रश्नों से जुड़ा तीसरा प्रश्न यह है कि आर्यसमाज की राजनीति का सैद्धान्तिक आधार क्या हो? क्या हमारी राजनीति सिद्धान्ताधारित होनी चाहिए अथवा सिद्धान्तहीन? मूल्याधारित होनी चाहिए अथवा मूल्यहीन? उसकी कोई अपनी पृथक् आचारसंहिता होनी चाहिये अथवा नहीं? उक्त प्रश्नों के उत्तर में निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि मूल्यों-आदर्शों से रहित राजनीति 'स्वच्छ राजनीति' ही नहीं कहाती, फिर वह आर्यसमाज की राजनीति तो स्वीकार ही कैसे की जा सकती है? आर्यसमाज महर्षि के और वैदिक सिद्धान्तों, विचारों पर आधारित संस्था है, अतः उसकी राजनीति भी उन्हीं आदर्श सिद्धान्तों और विचारों पर आधारित होनी चाहिये। यदि इस निष्कर्ष को हम स्वीकार नहीं करेंगे तो हमें कहना पड़ेगा कि आर्यसमाज की राजनीति में अगर अन्य लोगों की राजनीति की तुलना में सिद्धान्ताधारित गुणवत्ता नहीं है, तो वैसी राजनीति आर्यसमाज के नाम से करनी ही नहीं चाहिये, क्योंकि उससे आर्यसमाज के संगठन की हानि ही हानि होगी। उसकी वैचारिक या सैद्धान्तिक प्रतिष्ठा नष्ट हो जायेगी। उसके आदर्श नष्ट हो जायेंगे और जब किसी समाज के आदर्श नष्ट हो जाते हैं तो वह समाज भी मिटता जाता है। सिद्धान्तों के आदर्श से रहित व्यक्ति आर्यसमाज के लिये हितकर सिद्ध नहीं होगा।

आज के राजनीतिक वर्ग ने "**राजनीति में सब कुछ चलता है या सब उचित है।**" यह चर्चा फैलाकर अपने लिए सभी अनैतिक छूटें स्वयं ले ली हैं।

इस स्वेच्छाचारिता का दुष्परिणाम यह निकल रहा है कि आज के प्रायः राजनीतिक जन झूठ, छल-कपट, षड्यन्त्र, दल-बदल, भ्रष्टाचरण, हेराफेरी, बेईमानी आदि किसी भी अनैतिकता से परहेज नहीं करते। धर्मनिरपेक्षता जैसी अज्ञानतापूर्ण अवधारणा ने वैसे ही हमको नैतिक संस्कारों से काट दिया है। उसका परिणाम सामने है- आदर्श-मूल्यों का ह्रास, व्यक्ति और समाज का नैतिक पतन। यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि जो व्यक्ति धार्मिक (नैतिक) नहीं होता वह ईमानदार नहीं होता, जो ईमानदार नहीं होता वह निष्ठावान् नहीं होता, जो निष्ठावान् नहीं होता वह देशहितैषी भी नहीं होता। धार्मिक अर्थात् नैतिक संस्कारों के अभाव में आज राजनीति प्रदूषित है और शासन-प्रशासन तन्त्र में भ्रष्टाचार का बोलबाला है। फोर्ब्स की रिपोर्ट के अनुसार भारत का भ्रष्टाचार-सूची में एशिया में पहला और विश्व में ७८ वाँ स्थान है। स्थिति इतनी विकराल हो गयी है कि भ्रष्टाचारी को पकड़ने वाला कुछ दिन बाद भ्रष्टाचार के मामले में स्वयं भी पकड़ा जाता है। आर्यसमाज का इस प्रकार की राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं होना चाहिए।

कुछ लोग कहते हैं कि आज की राजनीति में आदर्शों का पालन सम्भव नहीं है। ऐसा कहने वाले इसकी आड़ में स्वेच्छाचारिता की छूट लेना चाहते हैं, वे आदर्शाधारित कष्ट नहीं उठाना चाहते। आदर्श सदा चलते हैं और सदा जनता को अभीष्ट होते हैं। राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद, लाल बहादुर शास्त्री, गुलजारीलाल नन्दा, अब्दुल कलाम आदि की लोकप्रियता का कारण उनके आदर्श ही रहे हैं। स्पष्ट है कि आदर्श आज भी प्रिय हैं। आर्यसमाज राजनीति में आदर्शों को स्थापित करने का लक्ष्य दृढ़ता से रखेगा तो अवश्य लोकप्रिय होगा।

आचार्य चाणक्य और शास्त्रकारों ने सुख प्राप्ति का मूल धर्म को और धर्म का मूल अर्थात् आश्रय राज्य एवं राजा को माना है। वैदिक राजाओं के आश्रय से वैदिक धर्म और व्यवस्था का प्रसार विश्व में हुआ। जैन, बौद्ध मत का प्रसार राज्याश्रय से हुआ। आज विश्व में ईसाई और इस्लाम मतावलम्बी जितने भी देश हैं वे राज्यों और राजाओं के आश्रय से स्थापित और स्थिर हैं। महर्षि ने भी इस यथार्थ को स्वीकार कर अनेक राजाओं को वैदिक धर्म (आर्यत्व)

में दीक्षित करने का प्रयास किया था। हम सम्मेलनों-शोभायात्राओं से आर्यसमाज के अस्तित्व को बचाने का प्रयास तो कर सकते हैं किन्तु स्थिर विस्तार तो राज्याश्रय से ही सम्भव है। इन कारणों से महर्षि ने इस नीति पर प्रबल बल दिया है कि आर्यसमाज को राजनीति में भाग लेकर शासक बनना चाहिए। दूसरा विचारणीय बिन्दु यह है कि बहुसंख्या में एवं प्रबल उत्साह से भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलनों में भागीदारी करके और बलिदान देकर प्राप्त राज्यसत्ता को जिस प्रकार आर्यत्व विरोधी विरोधी शक्तियों को तटस्थ होकर सौंप देने की भूल आर्यसमाज ने की है, उस भूल को फिर कभी दोहराया नहीं चाहिए।

डॉ. सुरेन्द्र कुमार

वैदिक पुस्तकालय अजमेर द्वारा प्रकाशित पुस्तकों पर विशेष छूट

१. कुल्लियाते आर्य मुसाफिर (पं. लेखराम ग्रन्थ संग्रह)- दो भाग

लेखक- पण्डित लेखराम

सम्पादक- प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर, पंजाब

मूल्य- रुपये ~~९००~~/- **छूट पर**- ६००/-

२. महर्षि दयानन्द का पत्र-व्यवहार (दो भाग में)

मूल्य - रुपये ~~८००~~/- **छूट पर - ५००/-**

३. अष्टाध्यायी भाष्य- ३ भाग (१ सैट)

भाष्यकार- महर्षि दयानन्द सरस्वती

मूल्य- रुपये ~~५००~~/- **छूट पर**- ३५०

पुस्तकें हेतु सम्पर्क करें:-

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाता धारक का नाम - **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर। दूरभाष - 0145-2460120**

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

तीन वर्ष के पूर्व वैराग्य

जो बुद्धिमान् पुरुषार्थी, निष्कपटी, विद्यावृद्धि के चाहने वाले नित्य पढ़ें पढ़के पढ़ावें तो डेढ़ वर्ष में अष्टाध्यायी और डेढ़ वर्ष में महाभाष्य पढ़ के तीन वर्ष में पूर्ण व्याकरण होकर वैदिक और लौकिक शब्दों का व्याकरण से बोध कर पुनः अन्य शास्त्रों को शीघ्र सहज में पढ़-पढ़ा सकते हैं। किन्तु जैसा बड़ा परिश्रम व्याकरण से होता है वैसा श्रम अन्य शास्त्रों में करना नहीं पड़ता औश्र जितनी बोध इनके पढ़ने से तीन वर्षों में होता हैश उतना बोध कुग्रन्थ अर्थात् सारस्वत, चन्द्रिका, कौमुदी, मनोरमादि के पढ़ने से पचास वर्षों में भी नहीं हो सकता।

जैसे पवन सब को सुख देता हुआ सब के रहने का स्थान हो रहा है वैसे ही विद्वान् को होना चाहिये।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.४१

प्रवचनमाला-५४

मृत्यु सूक्त-४०

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर

लेखिका - सुयशा आर्य

परोपकारिणी सभा के पूर्वप्रधान डॉ. धर्मवीर जी के वेद-विज्ञान के अन्तर्गत प्रसारित व्याख्यानों की जनोपयोगिता को ध्यान में रखकर 'परोपकारी' में प्रकाशित किया जा रहा है। व्याख्यानों के लेखन का कार्य उनकी ज्येष्ठ पुत्री सुयशा आर्य कर रही हैं। -सम्पादक

इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सर्पिषा सं विशन्तु।
आनश्रवोऽनमीवाः सुरत्ना आ रोहन्तु जनयो योनिमग्रे।।

हम ऋग्वेद के दशम मण्डल के १८ वें सूक्त की चर्चा कर रहे हैं और इस मृत्यु-सूक्त में महिलाओं के सम्बन्ध में दो-तीन मन्त्रों में विशेष चर्चा की गई है। मन्त्र का सन्दर्भ देखते हुए हमने विचार किया था कि वर्तमान में समाज में जो परिस्थिति है, उसे हम पुरुषप्रधान समाज के रूप में देखते हैं। इसका एक उदाहरण मैं आपको देना चाहूँगा-एक बहुत बड़े इस्लाम के सुधारक, अपने को प्रचारक माननेवाले व्यक्ति एरनाकुलम् में रहते हैं। उनसे मिलने के लिए मैं और मेरे एक मित्र गए। वे तो नहीं मिले, उनके एक सचिव मिले, उनसे बातचीत होने लगी। बहुत सारी बातों पर चर्चा की। उनसे मैंने दो प्रश्न किए। मैंने कहा, आपने जो महिलाओं के कपड़े निर्धारित किये हुये हैं, विशेषरूप से जिसे आप बुर्का कहते हो, जिससे आप शरीर ढकने की बात कहते हो, यह आप क्यों पहनने के लिए बाध्य करते हो? तो जैसे स्वाभाविक रूप से लोग उत्तर देते हैं, उस व्यक्ति ने भी वैसा ही उत्तर दिया कि उनकी रक्षा करने के लिए, उनके सम्मान की रक्षा करने के लिए हम ऐसा करते हैं। मैंने उनसे पूछा, सम्मान की रक्षा कैसे होगी, यहाँ असम्मान की कौन-सी परिस्थिति पैदा हो रही है? उन्होंने कहा, दूसरों की बुरी नजर से बचाने के लिए बुर्का पहनना चाहिए। मैंने कहा कि बुरी नजर किसकी होती है? किसी महिला की होती है क्या? बोले नहीं, महिला की नहीं होती, पुरुष की होती है। मैंने कहा, यदि महिला को नजर बुरी होती तो हर महिला बुर्का पहने, यह बात समझ में आती है कि वे एक-दूसरे की बुरी नजर से बच जायेंगे। लेकिन कुदृष्टि महिला की नहीं पुरुष की है। मैंने उनसे पूछा, यदि पुरुष की कुदृष्टि है तो अपराधी कौन है? जिस पर कु दृष्टि डाली गयी है वह अपराधी है या जो कुदृष्टि डाल रहा है वह अपराधी है? यह उनके लिए बड़ी संकट की परिस्थिति होती है। मैंने कहा देखो, अपराध करनेवाला तो स्वतन्त्र घूम रहा है। अपराध करने वाले को अपराध करने की स्वतन्त्रता दी जा रही है और पीड़ित को दण्डित किया जा रहा है, क्योंकि उसे बुर्के से कोई सुख तो मिलता नहीं। उससे कोई लाभ भी नहीं मिलता, वह तो मजबूरी है, विवशता है, बाध्यता है। मैंने उनसे एक निवेदन और किया, चलो आप यह जो जबर्दस्ती कर रहे हो कि अपराधी को तो आप खुला छोड़ रहे हो और पीड़ित को बाध्य कर रहे हो कि वह अपराध की परिस्थिति पैदा न करे। इससे एक बात और सिद्ध होती है-यदि पुरुष की कुदृष्टि है और उस कुदृष्टि से महिला पीड़ित है, तो उसको बचाने के लिए आपने बुर्का ओढ़ा दिया, घूँघट निकलवा दिया, कपड़ा पहना दिया। लेकिन इसका एक अभिप्राय यह भी तो निकला कि यदि किसी महिला की कुदृष्टि से पुरुष पीड़ित हो तो? अर्थात् यहाँ मान लिया गया कि महिला की पुरुष पर कुदृष्टि नहीं होती है, नहीं तो पुरुष को बुर्का पहनना पड़ता, क्योंकि जो पीड़ित है उसको बुर्का पहनना पड़ेगा।

पीड़ा देनेवाले को स्वतन्त्रता है, यह एक ही ओर से चलने वाला अपराध है, जो पुरुष की ओर से होता है और यह मान लिया गया कि स्त्री की ओर से नहीं होता। यदि स्त्री की ओर से भी अपराध मान लिया जाता और पुरुष पीड़ित होता तो उसे बचने का उपाय करना पड़ता। पर

उसे तो अपराध करने की छूट है। यह जो चिन्तन है, यह हमारे वर्चस्व को सिद्ध करता है, हमारे औचित्य को नहीं। पिछले दिनों समाचारपत्रों में एक घटना थी- एक मौलाना साहब से किसी ने पूछा कि आप यह बुर्का क्यों पहनवाते हैं। मौलाना साहब ने बहुत ही विचित्र उत्तर दिया, कहा कि आप ट्रंक में ताला क्यों लगाते हो? ट्रंक में ताला तो इसलिए लगाते हैं कि हमारा सामान सुरक्षित रहे, चोरी न हो। तो वे बोले- हम इसीलिए बुर्का पहनवाते हैं कि हमारी इज्जत सुरक्षित हो। लेकिन वह भला आदमी यह भूल गया कि ट्रंक तो एक जड़ चीज है, वह स्वयं अपनी रक्षा नहीं कर सकता, उसके लिए अपना-पराया कुछ नहीं है। यदि मैं ताला न लगाऊँ तो वह अपने आप को नहीं बचा पायेगा, गिर जाए तो अपने-आप नहीं उठ जाएगा और कोई ले जाएगा तो वह मना थोड़े ही करेगा। लेकिन क्या स्त्री ऐसी ही है जैसे ट्रंक का सामान? यह मानसिकता है उसे वस्तु समझने की।

पुरुष किसी भी मत-सम्प्रदाय का हो, वह महिला से जाने-अनजाने ऐसा व्यवहार करता है जैसे वह वस्तु है और जैसे वस्तु पर किसी का अधिकार होता है और वह वस्तु का जैसा चाहे उपयोग करे, यही स्थिति हम समाज में देखते हैं।

वेद इस स्थिति को स्वीकार नहीं करता। बाकि किसी भी धर्मग्रन्थ से आप वेद की तुलना कर सकते हैं और आपको यह स्वतन्त्रता है कि कोई भी शब्द वेद में ऐसा नहीं है जो महिला को किसी तरह की निम्नता देता हो। इसका एक उदाहरण-विवाह संस्कार के कुछ प्रसंग हैं, उनसे आपको पता लग जाएगा कि किसकी क्या स्थिति है। एक प्रसंग है जब वर-वधू दोनों मण्डप में आते हैं, परिक्रमा करके दोनों खड़े हैं और यह कहते हैं जैसे दो जल मिलकर-

'समापो हृदयानि नौ।
सं मातरिश्वा सं धाता समुद्वेष्ट्री दधातु नौ'

अर्थात् आज हम दोनों के हृदय **'समापो हृदयानि नौ'** दो जलों की तरह से, जैसे कुएं का, तालाब का, घड़े का, नदी का, समुद्र का जल आपस में मिलाने पर चाहो कि आप इनको पृथक् कर दो, तो यह सम्भव नहीं होता। यह तो सुना था कि दूध और पानी में से हंस नीर-क्षीर विवेक कर लेता है- नदी का नीर भी नीर है और कुएं और तालाब का नीर भी नीर है और उन दोनों को मिला दो तो नीर ही बनेगा। दूसरी चीज है ही नहीं तो उसका विवेक कैसे होगा? विवेक तो तब होगा, जब एक से दूसरा कुछ भिन्न होगा। जब भिन्न ही नहीं है तो एक में एक जब मिल जाता है तो एक ही बन जाता है। पानी में पानी डालेंगे तो पानी ही बनेगा, गेहूँ में गेहूँ डालेंगे तो गेहूँ ही रहेगा और उनको आप अलग नहीं कर सकते। सरसों में सरसों के दाने मिला करके आप उनको कैसे अलग निकालेंगे? वही परिस्थिति मनुष्य के साथ है। वेदमन्त्र कहता है कि विद्वान् लोग सुनें, विद्वान् लोग जानें कि हम दोनों के हृदय जल के समान एक हो गए हैं। तो परमेश्वर, विद्वान् लोग, माता-पिता आदि लोग हमारा सहयोग करें, आशीर्वाद दें, मार्गदर्शन करें, जिससे हम इस एकता को जीवन में बना कर रखें। अब इस मन्त्र में कहीं भी नहीं है कि कोई नीचा या कोई ऊँचा है। **समापो हृदयानि नौ**, हम दोनों समान हैं और समान होकर जब मिले हैं तो जब दो समान मिलेंगे तो सदा एक ही तो बनेगा।

दर्शन का अपने यहाँ बड़ा अच्छा सिद्धान्त है। सृष्टि का जब विवेचन करते हैं तो एक विवेचन होता है - **'षट्पदार्थों का विवेचन'**। **'सामान्य विशेष समवाय'** आदि इस तरह से हम संसार के पदार्थों को समझते हैं। सामान्य किसे कहते हैं इसकी परिभाषा करते हुए शास्त्रकार कहता है-

सामान्यमेकत्वकरं विशेषस्तु पृथकत्वकृत।
तुल्यार्थता हि सामान्यं विशेषस्तु विपर्ययः।

पहले बताया कि संसार किन-किन पदार्थों से बना है-

सामान्यं च विशेषञ्च गुणान् द्रव्याणि कर्म च,
समवायं च तज्ज्ञात्वा तन्त्रोक्तं विधिमास्थिता।

जो विद्वान् थे, ऋषि लोग थे, वे इस संसार को समझने के लिए प्रयत्नशील हुए तो उन्होंने कुछ सिद्धान्तों को इस संसार में समझा, देखा, जाना। वे छः सिद्धान्त थे-सामान्य, विशेष, गुण, द्रव्य, कर्म, समवाय। इन छः तत्त्वों को उन्होंने समझा और इस संसार को समझने का यत्न किया इन

तत्त्वों से। उनमें एक तत्त्व है 'सामान्य'। सामान्य की परिभाषा क्या है, सामान्य का लक्षण क्या है? **सामान्यमेकत्वकम्**। सामान्य वो है जो एकता को करता है। दो समान चीजें मिलकर एक बनती हैं। हमारे यहाँ समानता का कितना बड़ा सिद्धान्त है। **जहाँ विशेषता होगी वहाँ दो होंगे। जो तुल्यता है, यह सामान्य का लक्षण है और विशेषता विपर्यय का लक्षण है**। इस तरह से जब हम देखते हैं कि शास्त्र क्या कह रहा है? वहाँ पर दोनों को समान परिस्थिति में, एकतुल्य मान करके दोनों ही वहाँ पर उपस्थित हैं। यह सिद्धान्त समानता का है। समानता होने से हमारे अन्दर एकता होगी। यदि समानता नहीं तो सद्भाव नहीं होगा तो एकत्व नहीं हो सकता है। जो-जो भी अवसर आते हैं, उन सभी स्थानों पर आपको एक बात निश्चित रूप से अनुभव होगी कि हमारे यहाँ कहीं भी महिला को निम्न नहीं माना गया।

विवाह का एक प्रसंग आता है, जिसे सप्तपदी कहते हैं, उनकी विस्तार से चर्चा का अवसर नहीं है। सप्त कहते हैं सात को, और पद कहते हैं कदम को, पग को। अर्थात् वर-वधू को हम दक्षिण में खड़ा करके, उत्तर की ओर चलाते हैं और उनसे सात मन्त्र बुलवाते हैं। वो सात बातें यदि गृहस्थ के जीवन में, विचार में, ध्यान में रहें, व्यवहार में रहें तो उनका जीवन कष्टकर नहीं होगा। जो अनावश्यक कष्ट आते हैं, उनसे वह बच सकता है। तो उन छः की चर्चा मैं नहीं कर रहा हूँ। यहाँ जो उससे सम्बद्ध बात है कि वेद व शास्त्र हमारे यहाँ जो स्त्री के लिए बात कहते हैं, वह क्या है? इस प्रसंग में कहा गया है **'सखे सप्तपदी भव' सा मामनुव्रता भव, विष्णुस्त्वा नयतु पुत्रान् विन्दावहै बहूँस्ते सन्तु जरदष्टयः** अर्थात् गृहस्थ में जब वर-वधू, पति-पत्नी, स्त्री-पुरुष रहते हैं, तो उनका पारस्परिक संबन्ध क्या होगा? पति-पत्नी तो नाम है उनका, लेकिन कौन किसकी मानेगा, किसका अधिकार चलेगा, कौन श्रेष्ठ होगा, किसको बड़ा कहेंगे? जब यह बात आती है तो सामान्य रूप से पुरुष यह समझता है कि वह ही सदा बड़ा पैदा हुआ है। पुरुष आयु में छोटा हो तो भी बड़ा होता है, कम पढ़ा है तो भी बड़ा होता है। वह पुरुष है इसलिए बड़ा है, वह स्त्री है इसलिए छोटी है। यह हमारे मन की, हमारे मस्तिष्क की धारणा है। लेकिन शास्त्र तो यह नहीं कहता, शास्त्र तो कहता है **'सखे सप्तपदी भव'**। इस संसार में जितने सम्बन्ध हैं, उनमें हर जगह बड़े-छोटे होते हैं। माता-पिता चाहे अनपढ़ हों, निर्धन हों, निर्गुण हों, माता-पिता के पद के नाते सन्तानों के लिए वे सदा ही पूज्य हैं, आदरणीय हैं, सेवनीय हैं, श्रद्धेय हैं, आप उनसे बड़े कभी नहीं हो सकते। जो बड़े भाई-बहन हैं वे भी बड़े ही रहेंगे। जो गुरुजन हैं, चाहे हम उनसे अधिक पढ़ भी जायें, उनसे अधिक योग्य भी बन जायें तो भी उनका गुरुत्व समाप्त नहीं होगा। धनी-निर्धन में धनवान् बड़ा होगा। राजा-अधिकारी में राजा बड़ा होगा। अधिकारी-प्रजा में अधिकारी बड़ा होगा। ये जो सम्बन्ध हैं बड़े और छोटे के, ये बने हैं, बने रहते हैं, इनमें बड़ा बड़ा ही रहता है और छोटा छोटा ही बना रहता है। एक ऊँचे पद पर होने वाला व्यक्ति कितनी भी छोटी आयु का है, वह पद के अनुरूप बड़प्पन को पाता है और उससे पद में छोटा व्यक्ति आयु में बड़ा होने पर भी छोटा होता है। यहाँ बताया गया है, **सखे सप्तपदी भव**। घर में कौन बड़ा, कौन छोटा? तो शास्त्र कहता है जो सातवाँ कदम तुम चल रहे हो ना, संस्कृत में सात कदम जो भी साथ चलता है उसे सखा कहते हैं **'सप्तपदीनं सख्यम्'**। जो सखा भाव है, वह थोड़ी सी दूर चलने पर पता लग जाता है कि कितना हमारे अनुकूल है, कितना प्रतिकूल है। तो यहाँ कहा गया है, **'सखे सप्तपदी भव'**। अर्थात् हम दोनों सखा, मित्र बनकर के रहेंगे। मित्र वह सम्बन्ध है जिसमें ना कोई बड़ा ना कोई छोटा होता है, कोई नीचा नहीं होता, कोई ऊँचा नहीं होता, कोई अच्छा नहीं होता कोई बुरा नहीं होता, कोई श्रेष्ठ नहीं होता कोई हीन नहीं होता। दोनों समान होते हैं। यह जो समानता का आदर्श है यह हमें इस मन्त्र में दिखाई देता है।

आर्ष ग्रन्थों का गठन

महर्षि लोगों का आशय, जहाँ तक हो सके वहाँ तक सुगम और जिसके ग्रहण में समय थोड़ा लगे इस प्रकार का होता है और क्षुद्राशय लोगों की मनसा ऐसी होती है कि जहाँ तक बने वहाँ तक कठिन रचना करनी जिसको बड़े परिश्रम से पढ़के अल्प लाभ उठा सकें, जैसे पहाड़ का खोदना, कौड़ी का लाभ होना और अन्य ग्रन्थों का पढ़ना ऐसा है कि जैसा एक गोता लगाना, बहुमूल्य मोतियों का पाना।

कुछ तड़प-कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

कर्नाटक का पहला आर्यसमाज, पहला आर्यसमाजी और ऋषि का वह पत्र- मान्य धर्मवीर जी ने ऋषि के पत्रों की खोज तथा पत्रों के प्रकाशन के लिये अविस्मरणीय कार्य किया है। डॉ. वेदपाल जी द्वारा सम्पादित ऋषि का पत्र-व्यवहार उन्हीं की सूझ व लगन का फल है। इस पर विरजानन्द जी ने भी बहुत श्रम किया। धर्मवीर जी की इच्छा थी कि इसके आरम्भ में ५०-६० पृष्ठ तक की सामग्री ऋषि के पत्र-व्यवहार के महत्त्व पर दी जावे। आपने मुझे कहा, ''आपको पण्डित भगवद्दत्त जी , पूज्य मीमांसक जी का स्नेह व सत्संग बहुत प्राप्त रहा है। ऋषि के पत्र-व्यवहार संग्रह के आन्दोलन विषयक उर्दू पत्रों की सब सामग्री आपके पास है सो आपने इस सम्बन्ध में गहराई से लिखना है।''

धर्मवीर जी चले गये। उस पत्र-व्यवहार के आकार के बढ़ जाने से यह योजना धरी-धराई रह गई। धर्मवीर जी, विरजानन्द जी वाले पत्र-व्यवहार के प्राक्कथन के लिये दोनों ने ऐसी ही इच्छा व्यक्त की। छपने तक सभा ने उसको देखने का अवसर न दिया। फिर कहा कुछ लिख भेजो। उस पत्र-व्यवहार में रावलपिण्डी से अंग्रेजी में लिखा एक पत्र है। इस पत्र के ऐतिहासिक महत्त्व को जाननेवाला आर्यसमाज में...। मैंने ज्योत्स्ना जी आदि सबसे पूछा कि धर्मवीर जी को यह पत्र मिला कहाँ से? इस पर कोई प्रकाश न डाल सका। कुछ धुँधली सी जानकारी तो थी, पर सुनिश्चित प्रमाण के बिना कल्पना की उड़ान से कुछ लिखना बहुत अखरता है।

दो-चार दिन पूर्व 'महर्षि दयानन्द सरस्वती के पत्र', परोपकारी के अप्रैल १९८७ के अंक को अपने भण्डार से खोज निकाला। इसके आर-पार जाने से पता चला कि धर्मवीर जी को यह जीर्ण-शीर्ण पत्र परोपकारिणी सभा में कागजों के ढेर में से ही मिला था। महर्षि दयानन्द के सम्पूर्ण जीवन चरित्र में 'दक्षिण भारत का पहला आर्यसमाज' शीर्षक आर्यसमाज के इतिहास विषयक नई खोज व नया अध्याय है। धर्मवीर जी द्वारा खोजा गया यह पत्र उसी समाज के संस्थापक की धर्मधुन पर और नया प्रकाश डालता है। यह उस समाज के जन्मदाता का उल्लेख करने वाला (दक्षिण भारत के पहले आर्यसमाजी विषयक) **ऋषि का इकलौता पत्र है।** इस सेवक का पहले यह मत था कि श्री कृष्ण शास्त्री कर्नाटक का पहला विद्वान् पुरुष था जिसने ऋषि को पूना में सुना था। फिर खोज करते-करते पता चला मैंगलूर का यह आर्यपुरुष दक्षिण भारत का प्रथम आर्यवीर था जिसको ऋषि-दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

आर्यसमाज के इतिहासकार अब तक यही मानते थे कि स्वामी नित्यानन्द जी के प्रचार से मैसूर में पहला समाज स्थापित हुआ। हमने तत्कालीन मासिक पत्र के प्रमाण से सिद्ध कर दिया कि मुम्बई के पश्चात् दूसरा समाज मैंगलूर कर्नाटक में ऋषि के जीवनकाल में स्थापित हुआ। धर्मवीर जी द्वारा खोजा गया अंग्रेजी में लिखा गया यह सन् १८७७ का पत्र धर्मवीरजी की अद्भुत देन है। इसका महत्त्व कोई इतिहासज्ञ ही बता सकता है। आश्चर्य का विषय है कि दक्षिण भारत में कर्नाटक के किसी आर्य ने मेरे अनुरोध पर भी इस व्यक्ति, इस समाज पर दो शब्द नहीं लिखे। डॉ. सुमित्रा जी (पं. सुधाकर जी की पौत्री) ही इस कार्य को सिरे चढ़ा सकती हैं।

इतिहास-प्रदूषण की एक चटपटी घटना- पराधीन देश के सुपठित नागरिकों में थोड़ी बहुत हीन भावना आ ही जाती है। अंग्रेजी राज में कई देशप्रेमी दिखने वाले योग्य वक्ता, विद्वान् व लेखक अपने लेखों व व्याख्यानों में गोरे लेखकों को उद्धृत करने में अपनी शान समझते थे। गोरों के राज के चले जाने पर भी कई लोगों की हीनभावना जस की तस बनी रही। ईसाई पादरियों तथा ऋषि दयानन्द को विषय बनाकर एक लेखक ने कर्नल अल्कॉट तथा ऋषि जी की भेंट ३० अप्रैल सन् १८७९ को सहारनपुर में करवा दी। उनका संवाद भी अल्कॉट की डायरी के आधार पर उद्धृत करने से भले ही संकोच किया, परन्तु यह लिख दिया कि दोनों में क्या चर्चा हुई यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। **तथ्य यह है कि ऋषि तो ३० अप्रैल को सहारनपुर थे ही नहीं। वे देहरादून में थे।** अल्कॉट ने मनगढ़न्त कहानी लिख दी। उस काल के कई महानुभावों

ने इस झूठ की पोल खोल दी। ऋषि के पत्र-व्यवहार से भी यही प्रमाणित हो गया कि अल्कॉट का लेख सर्वथा मिथ्या है।

श्रद्धेय लक्ष्मण जी ने कर्नल अल्कॉट व मैडम ब्लैवट्स्की के भारत-आगमन के समय की एक और चटपटी कहानी का अपने ग्रन्थ में उल्लेख करके इतिहास-प्रदूषण को रोका। हमने इस कहानी को सम्पूर्ण जीवन-चरित्र के तीसरे भाग के लिये स्थगित रखा और पं. लक्ष्मण जी की जानकारी के मूलस्रोत की खोज में लग गये। तब ऋषि के जीवनकाल में ही लाहौर के उर्दू मासिक 'विद्याप्रकाशक' के मार्च १८७९ के अंक के पृष्ठ ४२ पर **'अमेरिका के ऋषि'** उपशीर्षक से एक चटपटा समाचार अल्कॉट तथा बलैवट्स्की के आगमन सम्बन्धी छपा मिलता है। **इसकी एक दुर्लभ प्रति केवल हमारे पास ही है।**

यह समाचार इतिहास-प्रदूषण तो है ही। हीनभावना का भी ज्वलन्त प्रमाण है। इसमें छपा है कि ये दोनों ऋषि के दर्शनों को देहरादून गये हैं। जिन्होंने इनके दर्शन करने हों वे देहरादून जा सकते हैं। अमृतसर लाहौर से भी कुछ सज्जन जायेंगे। मैडम की बड़ाई करने में तो सम्पादक सब सीमायें लाँघ गया। सुन-सुना कर सम्पादक ने यह सर्वथा निराधार समाचार प्रसारित कर दिया। **उन दोनों को ऋषि भी घोषित कर दिया गया।** यह सब हीनभावना का फल था। पीएच.डी. करने के लिये इधर-उधर से ऐसे समाचार खोजने वाले न जाने इसे उठाकर कितना अनर्थ कर देते। भला हो पं. लेखराम जी तथा पं. लक्ष्मण जी का जिन्होंने घूम-घूम कर सामग्री एकत्र की और ऐसी गप्पों को ऋषि-जीवन में घुसने न दिया।

लहलहाती है खेती दयानन्द की- संस्थाओं के जीवन में कई उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। सुयोग्य, निष्ठावान् तथा पुरुषार्थी, परमार्थी सेवकों को आर्यसमाज के संगठन से जोड़ना और उनको आगे लाना आज के युग में अति कठिन है। राजनीतिक क्षेत्र के प्रलोभन, हर बुराई से लड़ने वाले आर्यसमाज के मार्ग में बहुत बड़ी बाधा हैं। समर्पित, ईश्वर-विश्वासी ऋषिभक्तों को बाधाओं को चीरते हुये समाजसेवा में जी-जान से लगे रहना चाहिये। तप व सेवा कभी निष्फल नहीं जाते। भले ही सभाओं में विघटन व शिथिलता का आर्यसमाज की गतिविधियों पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है तथापि देश भर में कई सुयोग्य लगनशील युवक मिशनरी देश भर में नये-नये चरित्रवान् सुयोग्य युवकों को आर्यसमाज में खींचकर सक्रिय कर रहे हैं। अभी-अभी महेन्द्रगढ़ जाने का अवसर मिला। वहाँ प्रिय अनिल के प्रयास से डॉ. योगेन्द्र नाम के रसायनशास्त्र के पीएच.डी. अध्यापक के वैदिक-धर्म के प्रति अनुराग को देखकर अनायास मुख से निकल आया-

'लहलहाती है खेती दयानन्द की'

इस स्वाध्यायशील मेधावी युवक पर स्वामी सत्यप्रकाश जी के सैद्धान्तिक साहित्य का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा है। पत्थर-पूजा वह पहले ही छोड़ चुका था। वैदिक-धर्म के मुख्य-मुख्य सिद्धान्तों की उनसे चर्चा छेड़कर विशेष आनन्द की अनुभूति हुई। इसी प्रकार वहाँ अनिल जी के एक प्रेमी, प्राथमिक शाला के श्रद्धावान् आर्य युवा अध्यापक से भेंट करके हर्ष हुआ। यह ठीक है कि जिन नये-नये लोगों को हम खींचते हैं वे सब टिकते नहीं, परन्तु धर्मप्रचार में हमें निरन्तर लगे रहना चाहिये।

ऋषि दयानन्द के सर्वस्व त्यागी शिष्य- अभी-अभी श्री मनमोहन कुमार जी का उदयपुर जोधपुर विषयक ऋषि की प्रचार-यात्रा पर एक लम्बा लेख उत्सुकता से पढ़ा। 'आर्य मार्तण्ड' के छोटे अक्षर पढ़ना मेरे बस की बात तो नहीं तथापि जैसे-कैसे पढ़ ही लिया। युवा लेखक का कुछ चिन्तन व निष्कर्ष तो ठीक-ठीक लगा, परन्तु उदयपुर, जोधपुर विषयक घटनाओं की जानकारी के मूलस्रोत का आपने संकेत ही नहीं दिया। उदयपुर में ऋषि की दिनचर्या का वर्णन कविराजा श्यामलदास की कोटि के प्रतिष्ठित राज्य अधिकारी व ऋषिभक्त ने किया है। उसने तो सत्यार्थप्रकाश का संशोधित संस्करण उदयपुर में तैयार करने का कतई उल्लेख नहीं किया। सुनी-सुनाई बातों पर विश्वास करने से लाभ की बजाय हानि ही होती है। कविराजा जैसे प्रामाणिक साहित्यकार विद्वान् को किसने पढ़ा है?

महाराणा सज्जनसिंह आदरणीय तथा निष्ठावान् ऋषिभक्त थे। इसमें दो मत नहीं। ऋषि उन्हीं को ही अपना सबसे विश्वसनीय अनुयायी व योग्य उत्तराधिकारी मानते थे- यह भावुक हृदय का निष्कर्ष है। धौलपुर सत्याग्रह आन्दोलन में राजस्थान से उस संघर्ष में तो न कोई सत्याग्रही मिला और न कोई नेता व राजा आन्दोलन की आग में

कूदा। उस काल में मूलस्रोतों तथा तत्कालीन इतिहास पर अधिकार प्राप्त करके ही कुछ कहना ठीक है।

अभी कुछ दिन पहले कहीं से चलभाष पर एक सुयोग्य बन्धु ने पं. लेखराम के बलिदान पर अमेरिका के एक पत्र में उन पर छपे लेख की चर्चा छेड़ी। क्या यह कोई साधारण घटना है? उस लेख का उर्दू अनुवाद जो उस समय भारत में छपा था, वह हमारे पास सुरक्षित है। बलिदानी पं. लेखराम, तुलसीराम, स्वामी श्रद्धानन्द और चिरञ्जीलाल की सतत साधना व बलिदान का मूल्यांकन न करना हमारी भयङ्कर भूल होगी। योग्य, सर्वत्यागी, बलिदानी, लहू का कण-कण देकर इतिहास लिखने वाली इस टोली में पं. गणपति शर्मा, स्वामी दर्शनानन्द जी, महाराज नित्यानन्द और शूरता की शान स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी, तपोधन पूज्य नारायणस्वामी जी को जोड़ लिया जावे।

अमेरिका में, पश्चिम के साहित्य में और पाकिस्तान में प्रकाशित आधुनिक लोकप्रिय साहित्य में ऋषि की चर्चा, **ऋषि के सिद्धान्तों की छाप पं. लेखराम और उनके वंश की कृपा से है।** संसार और किसी को नहीं जानता। डॉ. शहरयार शीराज़ी का नाम आर्यसमाजी तो नहीं जानते। श्री अजय आर्य अवश्य जानते हैं। उनके साहित्य पर आर्यसमाज की छाप का कारण पं. लेखराम वंश है और कोई नहीं। अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के लेखक श्री अनवर शेख कब्र में नहीं गये। उनका दाहकर्म किया गया। यह परोपकारी में भी छपा था। यह इतिहास किसी बड़े नेता, किसी राजा-महाराजा व भव्य भवनों ने नहीं रचा था। इसका श्रेय पं. लेखराम वंश को प्राप्त है। अस्पृश्यता के उन्मूलन के लिये बाल-विवाह उन्मूलन, शुद्धि-प्रचार, जाति-भेद मिटाने, देवदासियों की कुप्रथा के उन्मूलन के लिये महात्मा मुंशीराम, महात्मा आत्माराम, महात्मा फूलसिंह, वीर रामचन्द्र, वीर मेघराज, प्राणवीर श्यामलाल, वीर वेदप्रकाश, पं. नरेन्द्र जी को समझने का सौभाग्य प्राप्त करो। ऋषि को विष दिया गया तो जोधपुर का राजपरिवार पता करने भी न आया।

आर्यसमाज के दो ऐतिहासिक गीत- बहुत पुरानी बात हो गई। श्री पण्डित युधिष्ठिर जी मीमांसक ने अपनी एक पुस्तक में महर्षि की जन्मशताब्दी मथुरा के महोत्सव पर दो गीतों की लोकप्रियता तथा धूम का विशेष उल्लेख किया। एक गीत कविरत्न प्रकाश जी रचित था- **'वेदों का डंका आलम में बजवा दिया ऋषि दयानन्द ने'** दूसरा गीत पंजाब के आर्यभाई बड़े जोश व श्रद्धा से झूम-झूम कर गा रहे थे। **'वेदाँ वालया ऋषिया तेरे आवन दी लोड़'।** पं. युधिष्ठिर जी के उदगार पढ़कर इस विषय में इस विनीत ने भी एक एक लेख लिखकर कुछ पूरक जानकारी दी।

'वेदों का डंका आलम में' गीत को दो मण्डलियाँ जिस उत्साह, श्रद्धा व जोश से गा रही थीं। इनमें एक तो अजमेर की ही मण्डली थी और दूसरी कादियाँ आर्यसमाज के लाला हरिराम जी की मण्डली थी। लाला हरिराम जी इस गीत को जिस भावभरित हृदय से गाया करते थे, वह तो बस देखे ही बनता था।

एक तीसरे गीत की पूज्य मीमांसक जी चर्चा करना भूल गये। **'जग विच घुमाँ पइयाँ दयानन्द तेरियाँ हो'।**

इस गीत को हमारे बड़े भ्राता प्रिंसिपल देशराज जी प्रभातफेरियों में कादियाँ में भावविभोर होकर श्रद्धा में डूबकर गाया करते थे। प्राचार्य रमेशचन्द्र जी 'जीवन' उन्हीं के लगनशील सुयोग्य सपूत हैं। इन पंक्तियों के लेखक का लेख पढ़कर अनेक आर्यों ने चलभाष पर तथा मिलकर इन दोनों गीतों के रचयिता गीतकारों पर कुछ लिखने की उत्कट इच्छा प्रकट की।

हमने बहुत खोज की, परन्तु ये दो गीत किस-किस आर्यकवि की रचना हैं? कुछ अता-पता न चला। पुरानी भजन-पुस्तकों में ये दोनों गीत छपे तो मिल गये, परन्तु कवियों के नाम न मिले। अस्सी वर्ष से ऊपर समय से इन्हें अपने जन्मस्थान के समाज के सत्संगों व परिवार में सुनने व गाने का संस्कार तो प्रबल रहा, परन्तु कवियों का नाम पंजाब में कोई भी न बता सका। आर्य गीतकार श्री सत्यपाल पथिक जी को भी पता लगाने को कहा।

अकस्मात सात-आठ अक्टूबर को प्रिय अनिल आर्य जी के लिये कुछ अलभ्य साहित्य भेंट करने के लिये अपने भण्डार से कुछ साहित्य छाँट रहा था तो **'गड़गज भजनमाला'** गीतों की पुस्तक को उलट-पुलट कर देखा तो ये दोनों गीत पंजाबी भजनों की उस युग की लोकप्रिय पुस्तक में मिल गये। सन् १९२३ में महर्षि की जन्मशताब्दी के उपलक्ष्य में महाशय राजपाल जी ने यह उत्तम संग्रह

छपवाया था। रचयिता कवि का नाम श्री पण्डित कृष्ण आर्योपदेशक है। रचयिता की चर्चा हमने स्वामी धर्मानन्द जी की जीवनी में कुछ की है। आप अमृतसर निवासी थे। जीवन के अन्तिम भाग में आर्य संन्यासी के रूप में भी धूम मचाई। ऐसा हम सुनते रहे। विस्तार से कभी फिर लिखा जायेगा। हम उन आर्य धर्मानुरागी बन्धुओं के आभारी हैं जिनके कारण एक अति कठिन कार्य हम कर पाये।

महाकवि बेन्द्रे का पुण्य स्मरण- कई बार बहुत छोटी दीखने वाली घटना का बड़ा महत्त्व होता है, परन्तु मनुष्य अपनी अल्पज्ञता से उसे समझ नहीं पाता। हमने कभी पहले भी 'परोपकारी' में भारत के एक यशस्वी साहित्यकार ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्तकर्त्ता कन्नड़ महाकवि बेन्द्रे पर कुछ लिखा था। ऋषि दयानन्द तथा वेद के प्रति उनकी गहरी श्रद्धा व विद्वत्ता का एक संस्मरण दिया था। आर्यसमाज के लोग धर्मप्रचार के ऐसे उपयोगी प्रसंगों को मुखरित भी नहीं करते और लाभ भी नहीं उठाते। हमने पं. भगवद्दत्त जी की जीवनी में भी उनसे सम्बन्धित एक उल्लेखनीय घटना दी है। कर्नाटक आर्यसमाज के इतिहास में भी यह प्रसंग कुछ-कुछ दिया है।

मान्य धर्मवीरजी जब इस लेखक के साथ अपनी अन्तिम महाराष्ट्र यात्रा में गुंजोटी गये, तब हम मार्ग में आर्यसमाज शोलापुर के साप्ताहिक सत्संग में सम्मिलित हुये। गुंजोटी वाले गाड़ी लेकर हमें वहाँ ले जाने के लिये आ गये। हम दोनों आर्यमन्दिर से बाहर निकले ही थे कि कई आर्यपुरुषों ने दोनों को घेर लिया। उनमें से एक ने अत्यन्त भावुक होकर पूछा, ''आपकी महकवि बेन्द्रे जी से भेंट कैसे हुई? यह प्रसंग सुनाकर जावें।''

''आपको यह कैसे पता चला कि महाकवि बेन्द्रेजी से इस सेवक को मिलने का कभी गौरव प्राप्त हुआ?'' हमने उनसे पूछा।

तीक्ष्णबुद्धि धर्मवीर जी हम दोनों के प्रश्नोत्तर से ताड़ गये कि यह कोई घटना विशेष है। महाकवि बेन्द्रे का नाम श्री डॉ. धर्मवीर जी ने उस दिन पहली बार ही सुना था।

प्रश्न करनेवाले, सूझबूझ वाले आर्यभाई ने बताया कि उनका सुयोग्य सुपुत्र उनके जीवन-चरित्र के लिये आपसे उस भेंट के संस्मरण लेने यहाँ आर्यसमाज पहुँचा था। हमने उन्हें बताया कि वह तो पंजाब चले गये।

यह सुनकर धर्मवीर जी के कान और खड़े हो गये कि यह मिलन तो कुछ विशेष महत्त्व रखता है।

संक्षेप से उन्हें बताया कि यह सन् १९६५ की अथवा सन् १९६६ के आरम्भिक महीनों की घटना है। दयानन्द कॉलेज के कन्नड़ भाषा के अत्यन्त अध्ययनशील प्रोफेसर मेरे अत्यन्त कृपालु (ब्रह्मचारी भी रहे) डॉ. दीवानजी ने मुझे कहा, ''डॉ. बेन्द्रे यहाँ पधारे हैं। आपकी इच्छा हो तो मैं आपके लिये उनसे समय ले सकता हूँ।''

तत्काल उन्हें समय लेने की प्रार्थना की और उन्हें वैदिक साहित्य भेंट करने के लिये आर्यसमाज के साहित्य बिक्री-विभाग से कुछ साहित्य लेकर उनके पास जाने की तैयारी कर ली। तभी दीवान जी ने कहा महाकवि आपसे मिलने कॉलेज ही पहुँच रहे हैं। मैं उनके बड़प्पन का शब्दों में क्या वर्णन करूँ? उनकी आकृति (बाल-दाढ़ी) श्री पं. ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु के सदृश थी। उनका मुखड़ा मुनियों सरीखा था। वह संस्कृत, हिन्दी, मराठी, कन्नड़, अंग्रेजी आदि कई भाषायें जानते थे। विज्ञान का भी कार्यसाधक अच्छा ज्ञान था। स्वभाव में विनम्रता थी। प्रेमल तो थे ही।

उनका अभिनन्दन करते हुये उन्हें पं. भगवद्दत्तजी कृत 'भारतीय संस्कृति का इतिहास' तथा उपाध्याय जी कृत 'वेद प्रवचन' आदि की एक-एक प्रति आर्यसमाज की ओर से भावभरित हृदय से भेंट की। कई प्राध्यापक उनके दर्शन करने व उन्हें सुनने खिंचकर आ गये। पं. भगवद्दत्तजी का पुस्तक पर नाम पढ़ते ही वह झूम उठे और बोले, ''Pt. Bhagwad Datta is a great son of Bharat Mata.'' उनके मुख से यह वाक्य सुनकर सेवक गद्गद हो गया। फिर वेद-प्रवचन उठाया तो वेद की महिमा तथा महर्षि की वेद भाष्य शैली की विशेषताओं पर खुलकर सप्रमाण बोले। उनके शब्दों को रिकॉर्ड करने के लिए मेरे पास साधन ही नहीं थे। क्या करता?

कर्नाटक में पं. सुधाकर चतुर्वेदीजी उन्हें जानते हैं। आप भी उनके सौजन्य व विद्वत्ता तथा वेद-निष्ठा की प्रशंसा करते हैं। सार्वदेशिक में इस भेंट पर मेरा लेख पढ़कर श्री विजय आर्य जी (गोविन्दराम हासानन्द) ने मुझे बधाई व धन्यवाद दिया कि आपने हमारी पुस्तक ऐसी विभूति तक पहुँचा दी।

मिलने पर पं. भगवद्दत्त जी से पूछा, उनकी आपके

प्रति इतनी श्रद्धा...। पण्डित जी मेरा लेख पढ़ चुके थे। विनम्रता से बस इतना ही बोले, ''हाँ! वह मुझसे बहुत प्रेम करते हैं। वेद पर श्रद्धा है। ऊँचे विद्वान् हैं।'' यह भेंट डॉ. दीवानजी के स्नेह का परिणाम था। यह ईश्वर की अनुकम्पा थी। धर्मवीरजी होते तो उन्हें साथ लेकर उनके पुत्र से भेंट करने जाता। उनके साहित्य पर वैदिक-धर्म की रंगत पर हमें कुछ करना होगा।

ये वकील लोग- राम जन्मभूमि अभियोग के अन्तिम दिन हिन्दू महासभा के वकील ने एतद्विषयक एक पुस्तक से एक मानचित्र दिखाया तो मुस्लिम पक्ष के वकील मिस्टर राजीव धवन भड़क उठे और इसे फाड़कर सर्वोच्च न्यायालय में उसके पाँच टुकड़े कर दिये। वकीलों के तर्क-वितर्क पर तो हम कुछ नहीं कह सकते, परन्तु मुस्लिम पक्ष के वकील श्री धवन के इस दुस्साहस पर हमें बहुत आश्चर्य हुआ, धक्का लगा। वकील महोदय ने जी-जान से, जोश से अपने पक्षवालों के प्रति निष्ठा दिखा दी। आज बढ़िया वकील वही है जो भले ही कुछ भी मान्यता रखता हो, परन्तु जब किसी से फ़ीस लेकर न्यायालय में एक बार खड़ा हो जावे तो अपनी निष्ठा दिखाने के लिये ऐसे जोश से लड़े जैसे अमेरिकी सेनायें द्वितीय महायुद्ध में हिटलर व जापान की सेना से लड़ीं थीं। फ़ीस ली है कोई खेल तो खेला नहीं जा रहा। इन वकीलों के ऐसे कृत्य से भले ही दो सम्प्रदायों में दंगा हो जाये, परन्तु फ़ीस लेकर अपना जोश दिखाना इनका धर्म है।

बहुत पुरानी बात है। चौधरी चरणसिंह गाज़ियाबाद आर्यसमाज के अधिकारी थे। एक निकटवर्ती ग्राम में एक महिला को छेड़ने की घटना से दो गुटों में तनाव हो गया। जिस गुट के व्यक्ति ने छेड़ा था वे झट से कोर्ट में पहुँच गये। एक वकील को अपनी निर्दोषता की दुहाई देकर अपना वकील कर लिया। वकील के मुंशी को फीस जमा करवाकर ग्राम पहुँच गये।

दूसरे पक्ष के लोगों को पता चल गया कि ये दुष्ट तो चौधरी चरणसिंह को अपना वकील कर आये हैं। पीछे-पीछे वे भी चौधरी जी के पास पहुँच गये। आप तो आर्यसमाज का प्रचार करते-करवाते हैं, हमें बात-बात पर सत्यासत्य के विवेक व सदाचार का सन्देश देते हैं। क्या ऐसे दुष्ट की वकालत से सदाचार की रक्षा होगी? चौधरीजी को उनकी बात जँच गई। झट से व्यक्ति भेजकर उन्हें बुलवा लिया और कहा, ''क्या हम माँ, बहिनों और बेटियों का अपमान करनेवालों की वकालत करने यहाँ बैठे हैं?'' यह कहकर उनकी फाइल व फ़ीस फेंककर कहा, चले जाओ। हम सत्य व न्याय के लिय लड़नेवाले हैं?

सब हिन्दू हैं- जब महर्षि दयानन्द ने वेदादेश सुनाकर धर्मच्युत हो चुके भाइयों को जाति का अंग बनाने को कहा तो विधर्मी बनने वालों को अपनाने की बात तो दूर दलितों को गले लगाने के अपराध में हिन्दुओं ने हिन्दू राजा के राज में कश्मीर तथा इन्दौर में वीर रामचन्द्र तथा वी मेघराज की निर्मम हत्यायें कर दीं। हिन्दुओं ने कभी उनका बलिदान-पर्व भी न मनाया। डॉ. अम्बेडकर को अपनाने, ऊँचा उठाने का कारण बननेवाले महात्मा आत्माराम अमृतसरी का दलितोद्धार के अपराध में माहेश्वरी बरादरी ने १२ वर्ष के लिये बहिष्कार किया।

अब तीन वर्ष पहले विधर्मी बनाये गये भाइयों को अपनाने की घोषणा की गई। अभी तक देवबन्द, दिल्ली, अजमेर, अहमदाबाद और नागपुर में एक भी धर्मच्युत हुये परिवार को अपनाने का शुभ समाचार नहीं सुना। चलो पं. लेखराम के लहू की पुकार का कुछ तो परिणाम निकला। भले ही उसकी जय ये हिन्दू न बोलें। हृदय-परिवर्तन पर इन्हें बधाई।

अब नई घोषणा हो गई है कि ये सब हिन्दू हैं। इनके पूर्वज भी हिन्दू थे। इनकी परम्परायें भी हिन्दू हैं। जब ये सब हिन्दू ही हैं तो तीन वर्ष पूर्व इनको वापिस लेने की घोषणा का क्या अर्थ था? जब सभी हिन्दू हैं तो इस घोषणा का क्या अर्थ हुआ। फिर परस्पर मेल-मिलाप में बाधा क्या? फिर आदित्यनाथ महाराज 'लव जिहाद', 'लव जिहाद' की बात जब करते हैं तो उसका क्या अर्थ है? केरल से लेकर इन्हीं लोगों का अबोहर तक लव जिहाद का प्रचार है। सिख, बौद्ध और जैन भी स्वयं को हिन्दू मान रहे हैं। संघप्रमुख श्री सुदर्शनजी ने पंजाब में सिखों को हिन्दू कहा तो बड़े बादल ने आँख दिखाईं, फिर आप लोगों ने चुप्पी साध ली। हिन्दू के मूल सिद्धान्त क्या हैं? जो कुछ न माने और सब कुछ माने वह हिन्दू है। जो जड़ को, जल को, पेड़ को, नदी को पूजे वह हिन्दू। इनका धर्मशास्त्र एक नहीं। मन बहलाने के लिये कुछ भी कहते रहो।

निडर शास्त्रार्थ महारथी पं. शान्तिप्रकाश जी को शत शत नमन

कन्हैयालाल आर्य

समाज को दिशा देने वाले हमारे प्रेरणा पुरुष शास्त्रार्थ महारथी पं. श्री शान्तिप्रकाश जी ने सादा जीवन तथा उच्च मानवीय मर्यादाओं का निवर्हन तथा प्रचार-प्रसार किया। असत्य के निराकरण के लिए आपने शास्त्रार्थ कर सत्य की पताका का गौरव बढ़ाया। मानव-मानव के मध्य शासक-शासित का अन्तर समाप्त करने के लिए स्वतन्त्रता आन्दोलन में भाग लिया। सत्य के प्रचार-प्रसार हेतु स्वास्थ्य के मूल्य पर यात्रायें की और जीवन के अन्तिम क्षणों तक उत्साह से पूर्ण होकर मानवता के लिए जिए।

एक साधारण कद काठी का व्यक्ति एक अनाथ बालक, अपनी सतत साधना से कहाँ-से-कहाँ तक पहुँच गया। जिस क्षेत्र में उसने पग धरा, वह उसमें एक नामी और विशिष्ट व्यक्तित्व बनकर चमका। उस अटल ईश्वर विश्वासी, स्वावलम्बी व स्वाभिमानी समाजसेवी से हमारे युवक-युवतियाँ बहुत कुछ सीख सकते हैं। पं. शान्तिप्रकाश जी देश प्रसिद्ध विद्वान् बनकर बहुत आगे निकले। चाटुकारिता व सिफारिश से यशस्वी नहीं बने। पुरुषार्थ व परमार्थ से सब कुछ पाया।

अविभाजित भारत के पंजाब प्रान्त प्रदेश के एक सीमान्त ज़िला डेरागाज़ी खाँ के निकट कोट छुट्टा ग्राम में पिता श्री हऊ लाल व माता रामप्यारी के घर ३० नवम्बर १९०६ को एक बालक ने जन्म लिया जिसका नाम 'सेवाराम' रखा गया। यही 'सेवाराम' नाम का बालक अपने स्वाध्याय, सेवा, समर्पण के बल पर आर्यजगत् का उच्चतम नक्षत्र पं. शान्तिप्रकाश के नाम से प्रसिद्ध हुआ। आर्यसमाज का संगठन कोट छुट्टा में दृढ़ होता गया। सेवाराम का परिवार तो इस प्रचार से दूर-दूर व अलिप्त रहने का यत्न करता रहा। इस वातावरण में जन्मे इस बालक का पालन-पोषण पौराणिक रीति से हुआ फिर भी वैदिक धर्म के प्रचार की गूँज उसे भी सुनाई देती थी। यह बालक कुशाग्र बुद्धि था। ईश्वरीय ज्ञान वेद के सिद्धान्तों की अटल सत्यता ने उसे अपनी ओर खींचा। ग्राम के आर्यों विशेष रूप से महाशय मूलचन्द जी के जीवन ने हमारे चरित नायक को बहुत प्रभावित किया। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा, उर्दू, फारसी ग्राम में हुई। कुछ हिन्दी का भी अभ्यास कर लिया।

सेवाराम से शान्तिप्रकाश तक की यात्रा- पण्डित जी लगभग ६-७ वर्ष की आयु थी तभी पिता जी की छत्रछाया से वंचित हो गये। इन्हें आर्यों की संगति से इतना ज्ञान हो गया कि वेद प्रभु की वाणी है और यह ज्ञान कवल आर्यसमाज से ही प्राप्त हो सकता है। मन में यह ठान लिया। ज्ञान की भूख व सत्य की खोज में इस सच्चे जिज्ञासु ने कितने कष्ट झेले। कुछ समय तक पं. बुद्धदेव विद्यालंकार के प्रवचन भी सुने। तत्पश्चात् महर्षि दयानन्द की जन्म शताब्दी मथुरा नगरी में मनाई गई। वेद प्रचार के लिए एक उपेदशक विद्यालय की स्थापना का निर्णय लिया गया। स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज उस विद्यालय के आचार्य बने तथा कुछ समय के पश्चात् स्वामी वेदानन्द जी आचार्य बने। पं. शान्तिप्रकाश जी जिनका पूर्व नाम सेवाराम था के स्थान पर 'मनुदेव' स्वामी वेदानन्द जी ने रख दिया। इस विद्यालय में रहकर आपने सिद्धान्त भूषण की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसके साथ स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी ने आपको दीनानगर में शास्त्रार्थ करने के लिए भेज दिया। यह आपका प्रथम शास्त्रार्थ था। इस शास्त्रार्थ में विजय प्राप्त करने पर आपका यश सारे आर्यजगत् में फैल गया। प्रचार कार्य करते हुए पं. मनसाराम वैदिक तोप के आग्रह व प्रेरणा से आपका पुनः नाम 'मनुदेव' से शान्तिप्रकाश रख दिया। पण्डित जी स्वयं भी अपना नाम बदलने के इच्छुक थे। अतः उनकी इच्छा भी पूरी हुई और आर्यजगत् को शास्त्रार्थ महारथी के रूप में एक नया नक्षत्र मिल गया।

धर्मोपदेशक एवं धर्मवीर के रूप में स्थापना- उपदेशक विद्यालय से निकल कर १० वर्षों के भीतर आपने बहुत अधिक प्रसिद्धि प्राप्त कर ली। इसमें यदि कोई कमी थी तो कादियाँ के मिर्जाइयों की कृपा से प्राप्त हो गई। आपने कादियाँ में एक साढ़े सात घण्टे का लम्बा ऐतिहासिक भाषण मिर्जाइयों के पाखण्ड एवं उनकी पोल खोलने के लिए दिया। अग्रेंजी सरकार ने मिर्जाइयों के

दबाव में आकर आपको कारागार में डाल दिया। कारागार की यातनाओं ने पण्डित जी को एक तपस्वी धर्मोपदेशक के रूप में निखार दिया। और आपको आर्यजनता धर्मवीर के रूप में देखने लग गई।

स्वाभिमानी व्यक्तित्व- पण्डित जी का अतिथि सत्कार करने में कोई सानी नहीं था। इस कारण उनकी आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी। अत: उन्होंने किसी विद्यालय में अध्यापक के रूप में कार्य करने का निश्चय किया। विद्यालय का प्रबन्धक किसी कार्य के लिए सभा कार्यालय आया तो पं. जी से मिलना चाहा। पं. जी गुरुदत्त भवन में पं. शिवदत्त जी के साथ सैर कर रहे थे। कहीं से आवाज आई, ''ओ शान्ति! ओ शान्ति!'' यह शब्द असभ्यता पूर्ण थे। पता चला कि यह आवाज उस विद्यालय के प्रबन्धक की है। उसने पं. जी से पूछा, ''तू हमारे विद्यालय में कब कार्य प्रारम्भ करेगा?'' स्वाभिमानी पं. जी ने तत्काल दृढ़ता से कहा, ''अभी तो मैंने आपके विद्यालय में अध्यापन कार्य आरम्भ ही नहीं किया और आप 'ओ' पर उतर आये हैं, जब मैं वहाँ पहुँचूँगा तो फिर 'तू-तू' भी सुननी पड़ेगी। आप अपनी नौकरी को घर रखें। मैं नहीं आ सकता।''

ऐसा शुद्ध उच्चारण तो हमारे मौलाना भी नहीं सकते- हरियाणा में मेवात एक मुस्लिम बहुल क्षेत्र है। मेवात के उलेटा ग्राम में आर्यसमाज का उत्सव था। पण्डित जी को सुनने के लिए अपार जनसमूह उमड़ पड़ा। मुसलमान बन्धु भी बहुत बड़ी संख्या में उनको सुनने के लिए आये। मुस्लिम बहुल क्षेत्र में पण्डित जी कुरान के प्रमाण देंगे, यह सभी जानते थे, परन्तु वैदिक सिद्धान्तों की सच्चाई को सिद्ध करने के लिए कुरान की आयतों की झड़ी लगा देंगे, ऐसा वे नहीं जानते थे। उन्हें कुरान के इतने प्रमाण कण्ठस्थ थे कि मुसलमान श्रोता वाह वाह कहते रहे। पण्डितजी का कुरान का इतना शुद्ध उच्चारण सुनकर वे कहने लगे कि ''ऐसा शुद्धोच्चारण तो हमारे मौलाना भी नहीं कर पाते।'' मुसलमानों पर ऐसी छाप पड़ी कि मुसलमान उन्हें ग्राम के बाहर दूर तक विदा करने आये।

मेरे हृदय में महर्षि दयानन्द की प्रेरणा शक्ति आ जाती है- महात्मा प्रेमप्रकाश जी ने एक बार पण्डित जी से पूछा, ''पण्डित जी आप इस वृद्धावस्था में इतनी ऊँची आवाज में सिंह गर्जना कैसे कर लेते हैं?'' पण्डित जी ने सहजता से उत्तर दिया, ''महात्मा जी! जब मैं वेदी पर वैदिक धर्म के सिद्धान्तों पर कुछ बोलता हूँ तब मेरे हृदय में महर्षि दयानन्द की प्रेरणा शक्ति आ जाती है। महर्षि दयानन्द और पं. लेखराम मेरे आदर्श हैं। उनका निर्मल जीवन, साहस व शौर्य मेरे भीतर अदम्य उत्साह का संचार कर देता है। वृद्धावस्था में मेरी गर्जना का यही रहस्य है।''

ज्ञान पिपासु हो तो ऐसा!- पूज्य राजेन्द्र जिज्ञासु जी ने एक घटना कहीं सुनाई थी। मुझे यह स्मरण तो नहीं है, परन्तु उन्होंने जो घटना सुनाई वह इस प्रकार है- पं. जी आर्यसमाज नया बाँस दिल्ली में ठहरे हुये थे। वे एक बहुत बड़े रजिस्टर से कुछ नोट कर रहे थे। मैंने पूछा, ''पं. जी यह किसका रजिस्टर लिये बैठे हो?'' पं. जी ने उत्तर दिया, ''यह चन्दन सिंह का रजिस्टर है। इसमें कुछ अच्छे प्रमाण मिल गये हैं, शास्त्रार्थ के काम देंगे।'' यह सुनकर मैं दंग रह गया। कारण यह कि चन्दन सिंह तो आर्यसमाज का सेवक था। इतना बड़ा शास्त्रार्थ महारथी और एक सेवक के रजिस्टर में प्रमाण उद्धृत कर रहा है। यह कोई साधारण बात नहीं थी। मैंने मन ही मन कहा, ''ज्ञान पिपासु हो तो ऐसा।'' लोग हीन-भावना से ग्रस्त होने के कारण मिथ्या अभिमान से कई बार वे अपने से अधिक योग्य व्यक्ति से भी कुछ सीखना नहीं चाहते जबकि पण्डित जी ऐसे महामानव थे जो एक सेवक के ज्ञान का लाभ उठाने में किञ्चित् संकोच नहीं करते थे।

प्रचारक हो तो ऐसा- देश के स्वतन्त्र होने से पूर्व आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब को सूचना मिली कि शिमला की ओर विदेशी व स्वदेशी ईसाई पादरी अपने सम्प्रदाय के प्रचार में सक्रिय हो कर लगे हैं। सभा ने पं. शान्तिप्रकाश जी को भेजा। पण्डित जी आर्यसमाज शिमला के प्रधान जी से मिले। प्रधान जी ने कहा, ''यहाँ तो चने चबाकर काम करने वाला व्यक्ति चाहिये।'' यह सुनकर पण्डित जी वहीं डट गये। स्वयं ही योजना बनाकर आसपास प्रचार करने लगे। उनके पास थैला होता था, उसमें भुने हुए चने ले लेते। समाज का भोजन तक न लिया। अपने पैसों से चने चबाकर निर्वाह करते रहे। पं. जी के इतने अधिक सक्रिय होने के कारण वे पादरी कुछ ही दिनों में वहाँ से

नदारद हो गये। आज कल के प्रचारकों को प्रत्येक प्रकार की सुविधायें चाहिये। प्रचारको को ऐसे महामानव से प्रेरणा लेनी चाहिये।

उन्हें मान प्रतिष्ठा की भूख नहीं थी- पं. लेखराम जी के बलिदान पर्व पर पंडित जी लेखराम नगर कादियाँ पधारे। उत्सव का मुख्य आकर्षण पण्डित जी हुआ करते थे। बहुत से लोग स्टेशन पर उनको लेने गये। स्टेशन पर यात्री बाहर निकल रहे थे, परन्तु पण्डित जी बाहर निकलते नहीं दिखे। लोग पण्डित जी न पाकर निराश होकर आर्यसमाज मन्दिर लौट आये। लोगों ने सोचा कि यदि पण्डित जी नहीं आये तो आर्यसमाज का उत्सव असफल हो जायेगा। थोड़ी देर मे पण्डित को आर्यसमाज मन्दिर में देखकर आश्चर्य चकित हो गये। पता चला कि वे हमारे हाथों में पुष्प मालायें देखकर ही वे हमसे बचकर निकल आये। उनका ऐसा व्यवहार यह बतला रहा था कि उन्हें मान प्रतिष्ठा की कतई भूख नहीं थी।

उपदेशक हो तो ऐसा- पश्चिमी पंजाब का एक परिवार विवाह में सम्मिलित होने हेतु बस में यात्रा कर रहा था। एक और यात्री भी उस परिवार जैसा ट्रंक व ताला लगाये हुए यात्रा कर रहा था। मुलतान में दोनों ने बस बदलनी थी। परिवार वाले इस दूसरे यात्री (पण्डित जी) का भूल से ट्रंक लेकर चले गये और वहाँ से कुछ ही दूरी पर अपने सम्बन्धी के घर जाकर ज्यों ही ट्रंक खोला तो उसमें कुछ पुस्तकें, कापियाँ व कुछ वस्त्र थे। इधर दूसरे यात्री (पण्डित जी) ने उस ट्रंक को मुलतान से कुछ दूरी पर ज्यों ही ट्रंक खोला तो उसमें आभूषण एवं विवाह के मूल्यवान् वस्त्र थे। इस यात्री ने सोचा कि जिस परिवार का यह ट्रंक है वह कितना दु:खी होगा यह सोचकर वह यात्री पुन: बस स्टैण्ड पर आ गया। उधर वह परिवार भी रोता-चिल्लाता वहाँ पहुँच गया। इस दूसरे यात्री (पण्डित जी) ने उस परिवार को बुलाकर कहा, ''दु:खी होने की कोई बात नहीं। यह लो अपना ट्रंक, अपने माल की पड़ताल कर लो।'' उस परिवार की प्रसन्नता का कोई ठिकाना नहीं था। परिवार ने ट्रंक प्राप्त कर कुछ राशि इस दूसरे यात्री (पण्डित जी) को भेंट स्वरूप देनी चाही। दूसरे यात्री (पण्डित जी) ने गरजते हुए कहा, ''यह आप क्या कर रहे हैं?'' उस परिवार के एक सदस्य ने कहा, ''यह आपकी ईमानदारी के लिए प्रसन्नता पूर्वक दिया जा रहा है।'' इस दूसरे यात्री (पण्डित जी) ने कहा, ''ईमानदारी इसमें क्या है? यह तो मेरा कर्त्तव्य बनता था। मैं वैदिक धर्म का उपदेशक हूँ। ऋषि दयानन्द का शिष्य हूँ।'' इस घटना से उस सारे क्षेत्र में आर्यसमाज की वाह-वाह होने लगी। वह पुस्तकों वाला दूसरा यात्री और कोई नहीं था यह आर्यसमाज का विद्वान् युवक 'मनुदेव' था। जो आगे चलकर पं. शान्तिप्रकाश शास्त्रार्थ महारथी के नाम से विख्यात हुआ। ऐसे होते थे हमारे उपदेशक।

यह तो पूर्वजन्म का कोई मौलवी था- देश विभाजन से पूर्व पुनर्जन्म विषय पर मुसलमानों से एक शास्त्रार्थ हो रहा था। पं. जी पूर्वजन्म विषयक प्रश्नों के उत्तर दे रहे थे। अपने सिद्धान्त की पुष्टि में कुरान की कई आयतों के प्रमाण देकर जीव के अनादित्व व पुनर्जन्म की चर्चा कर रहे थे। पं. जी जब आयतें बोलते थे तो शास्त्रार्थ करने वाला मौलवी पं. जी के अरबी के ज्ञान तथा आयतों के शुद्धोच्चारण पर प्रसन्न हो उठता था। एक बार एक मौलवी ने कहा, ''आप तो कोई पिछले जन्म के मौलाना हो।'' पं. जी मुस्कराते हुए बोले, ''मैं मौलवी था या हाफ़िज़े कुरान, पुर्नजन्म तो सिद्ध हो ही गया।'' इस पर आर्यों ने करतल ध्वनि करते हुए वैदिक धर्म का जयकारा लगाकर हर्ष ध्वनि की। अपने विरोधियों को उनकी बातों से ही पराजित कराने में आप सिद्धहस्त थे।

लेखनी के धनी- पण्डित जी हिन्दी, उर्दू दोनों भाषाओं के सिद्धहस्त लेखक थे। देश विभाजन से पूर्व आप आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के हिन्दी मासिक 'आर्य' में सैद्धान्तिक लेख लिखते रहे। इस पत्र का स्तर बहुत ऊँचा था। पण्डित जी के लेख बड़े विचारोत्तेजक व पठनीय एवं खोजपूर्ण होते थे। आप 'आर्य साप्ताहिक' लाहौर, 'आर्य मुसाफिर' मासिक व साप्ताहिक लाहौर, 'आर्यवीर साप्ताहिक' रावलपिण्डी, लाहौर, जालन्धर, उर्दू साप्ताहिक रिफार्मर, 'आर्योदय', हिन्दी साप्ताहिक, 'आर्य मर्यादा', 'आर्यवीर उर्दू', 'आर्य मित्र' साप्ताहिक हिन्दी, 'दैनिक प्रताप' आदि में अपने विद्वत्तापूर्ण लेख दिया करते थे।

असाधारण लेखक- आपका हिन्दी व उर्दू दोनों

भाषाओं पर अधिकार था। वैसे आप ६ भाषायें जानते थे। गहन व विस्तृत अध्ययन के कारण जो कुछ भी लिखते व बोलते थे, वह ठोस तथा सारगर्भित होता था। यह सब कुछ होने पर भी वह कोई बड़ा ग्रन्थ न लिख पाये। उनकी साहित्य साधना का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है-

१. शास्त्रार्थ दर्पण- यह भक्ति दर्पण के आकार का उतना ही गुटका था जो उर्दू में छपा था। २. आर्यसमाज की आवश्यकता, ३. छः मार्च की खूनी होली, ४. और दहला पागल हो गया, ५. नीर क्षीर विवेक, ६. कुलियात आर्य मुसाफिर-द्वितीय खण्ड का हिन्दी अनुवाद।

पं. शान्ति प्रकाश जी जैसे प्रकाण्ड विद्वान् के परिश्रम का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता।

अन्तिम विदाई- मरना तो सबको है यह तो निश्चित है। यह सब जानते हैं, परन्तु सबको मरते हुए देखते रहते हैं फिर भी मुझे मरना है-यह नहीं मानते। संसार में मनुष्य जीवन की सफलता एवं सार्थकता इसमें है कि वह इस सत्य को जाने भी और माने भी। उस पाडित्य का क्या लाभ जो जर्जर मानव चोले का परित्याग करते हुए भी भयभीत है। स्वेच्छापूर्वक चोला छोड़ने वाले नर ही सच्चे आस्तिक हैं। पण्डित जी के सामने यही वेदोपदेश था। वे इस वैदिक दर्शन को मानने वाले थे। मृत्यु से कभी भयभीत नहीं हुए। जीवन के अन्तिम दिनों में अपने ज्येष्ठ पुत्र श्री रमेश जी से कहा, ''मुझे गुड़गाँव ले चलो, मुझे अब चोला बदलना है।'' उन दिनों वह जयपुर रह रहे थे। उन्हें मृत्यु का आभास हो चुका था। इसके स्वागत के लिए वे मानसिक रूप से पक्की तैयारी कर चुके थे। वे निश्चिन्त होकर मृत्यु के आगमन की प्रतीक्षा करते रहे। बारह फरवरी १९९४ को सायं सात बजे गुड़गाँव में आपने नश्वर देह का परित्याग किया। मृत्यु के समय उन्हें कोई कष्ट नहीं हुआ। एक दिन भी रुग्ण नहीं रहे। कर्म करते हुए कर्मवीर धर्मवीर ने जीवन बिताया। आज उन्हें विदा हुए लगभग २५ वर्ष हो चुके हैं। हम विचार करें उनके उस मिशन का हम कितना आगे बढ़ा सके हैं। यदि नहीं तो संकल्प करें कि हम उनके बताये मार्ग पर चलकर अपने जीवन को सार्थक करेंगे। उनकी सेवाओं का स्मरण करते हुए उन्हें नमन करते हुए लेखनी को यहीं विराम देते हैं।

(यह लेख मैंने प्राध्यापक राजेन्द्र जिज्ञासु द्वारा लिखित शास्त्रार्थ महारथी पं. शान्तिप्रकाश जी को आधार बनाकर लिखा है, इस हेतु विद्वान् लेखक इतिहास केसरी प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु' जी का आभार)

एक आहुति अपने आचार्य के लिए.....

ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा की तन, मन, धन से सेवा करने वाले, उसे अपनी मातृवत् समझने वाले और यहाँ तक कि अपना जीवन समर्पित कर देने वाले डॉ. धर्मवीर आज अपना समस्त भार आर्य जनता अर्थात् अपने उत्तराधिकारियों पर छोड़ गये हैं। उन्होंने ऋषि के स्वप्नों को अपना कर्त्तव्य समझकर सभा को गगनचुंबी ऊँचाइयों तक पहुँचाया। अनेक नये प्रकल्प चलाये यथा-वैदिक गुरुकुल, गोशाला, आश्रम, अतिथियों के ठहरने व खान-पान की निःशुल्क व्यवस्था आदि। उन्होंने जो-जो कार्य छेड़े उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति में कभी न्यूनता न आने दी। परोपकारिणी सभा ऐसे पुत्र को प्राप्त कर गौरव का अनुभव करती है और बिछुड़कर शोकग्रस्त होने का भी। उनके द्वारा शुरु किये कार्य कभी शिथिल न पड़ें, इस कारण **सभा ने डॉ. धर्मवीर जी की स्मृति में एक करोड़ रु. की स्थिर निधि बनाने का संकल्प लिया है,** जिससे कि धन धर्म के काम आ सके। इसमें सन्देह नहीं कि ये समस्त कार्य आर्य जनता के सहयोग से ही प्रारम्भ हो सके हैं और सहयोग से ही चल भी रहे हैं। इसलिये इसमें भी सन्देह नहीं कि सभा के इस संकल्प को आर्य जनता शीघ्र पूर्णता की ओर पहुँचा देगी और शायद उससे भी कहीं बढ़कर। यज्ञ तो हवि माँगता है। बिना हवि के यज्ञ की कल्पना भी क्या? बस देरी तो सूचित होने की है। हवि बनना तो आर्यों के खून में है, तन से, मन से अथवा धन से।

आप अपना दान चैक, ड्राफ्ट या सभा के खाते में सीधे भी भेज सकते हैं। कृपया, राशि भेजने के पश्चात् सभा में दूरभाष या पत्र द्वारा अवश्य सूचित कर दें। **कन्हैयालाल आर्य - मन्त्री**

१६ नवम्बर काशी शास्त्रार्थ के उपलक्ष्य में

जिनके हम ऋणी हैं

रघुनाथ प्रसाद कोतवाल

आर्य समाज के इतिहास में हम अपना परिचय ऋषि दयानन्द के साथ करते हैं। ऋषि के साथ परिचय करते हुए हम जिन लोगों से परिचित होते हैं, उनमें उनके गुरु दण्डी स्वामी विरजानन्द से परिचित होते हैं, जिनके बिना स्वामी दयानन्द ऋषि दयानन्द नहीं बन सकते थे। दण्डी स्वामी विरजानन्द ने ऋषि दयानन्द को वह दृष्टि दी, जिससे उन्होंने संसार को देखा और सत्य-असत्य का विवेक किया। जिस विवेक ने धर्म और पाखण्ड के अन्तर को स्पष्ट किया और ऋषि दयानन्द वैदिक धर्म का प्रचार करने में सफल हुए तथा पाखण्ड पर आक्रामक प्रहार कर सके। बौद्धिक दृष्टि से गुरुजी ने स्वामी दयानन्द को प्रखर बनाया, वहीं पर कुछ लोग हैं, जिन्होंने यदि सहयोग और सुरक्षा स्वामी दयानन्द को न दी होती तो सम्भव था, इतिहास न बन पाता या कुछ और प्रकार से बनता।

ऋषि दयानन्द के विद्याध्ययन में गुरुजी के अतिरिक्त अनेक सहयोगी हुए हैं। किसी ने दूध का प्रबन्ध किया, किसी ने दीपक के तेल का। मुख्य सहयोग भोजन का था, जो मथुरा निवासी अमरलाल जोशी ने किया, जिनके पौत्र मथुरा शताब्दी के समय थे। उसके बाद वे एक बार अजमेर भी पधारे थे। अब मथुरा के उस घर में सम्भवत: कोई नहीं रहता, सब इधर-उधर चले गये हैं।

प्रचार के समय में जिन्होंने सहयोग किया, वे अनेक महानुभाव हैं, परन्तु मंगलवार १६ नवम्बर १८६९ में काशी शास्त्रार्थ के समय जिन्होंने ऋषि दयानन्द की प्राण रक्षा की, वे थे रघुनाथ प्रसाद कोतवाल। जो बनारस के गुण्डों से बचाकर स्वामीजी को आनन्दबाग के दूसरे सिरे पर जहाँ नगर पालिका भवन है, उसके एक कमरे में ले गये तथा राजा को भी कहा कि आपकी उपस्थिति में एक अकेले संन्यासी पर काशी के सैकड़ों गुण्डे ईंट-पत्थर फेंकें और जान से मारने की चेष्टा करें, यह उचित नहीं। तब राजा ने कोतवाल रघुनाथ प्रसाद से कहा था- धर्म रक्षा के लिये कभी-कभी अनुचित का भी आश्रय लेना पड़ता है। इससे अधिक हम रघुनाथ प्रसाद कोतवाल के विषय में नहीं जानते। यह हमारा दुर्भाग्य ही है कि जो परिवार ऋषि के समय से काशी में रह रहा है, जिनके पौत्र अभी जीवित हैं, उनकी चर्चा आर्य समाज के इतिहास में उस महत्त्व के साथ उल्लिखित नहीं हुई।

गत दिनों काशी के आर्य समाज के कार्यकर्त्ता श्री अशोक कुमार त्रिपाठी जी से भेंट हुई और उन्होंने मुझे बताया कि उनके पास रघुनाथ प्रसाद कोतवाल का चित्र और उनके जीवन पर लिखी सामग्री सुरक्षित है। मैंने माँगी तो उन्होंने सहर्ष स्वीकृति देते हुए कहा कि मैंने यह सामग्री परोपकारी के लिये ही रखी है, अत: किसी और को नहीं दी। मैं बनारस जाकर वह चित्र और सामग्री आपके पास भेज दूँगा। अपने वचन के अनुसार त्रिपाठीजी ने स्वनाम धन्य रघुनाथ प्रसाद कोतवालजी तथा उनके पौत्र मेवालाल पाण्डे जो वर्तमान स्वामी ओमानन्दजी से संन्यास दीक्षा लेकर केवलानन्द बन गये हैं। इन दोनों का चित्र परोपकारी को भेजा, जो इस अंक में प्रकाशित किया जा रहा है। यह परोपकारी पत्र एवं परोपकारिणी सभा के लिये गौरव की बात है।

श्री अशोक कुमार त्रिपाठीजी ने जो रघुनाथ प्रसाद कोतवाल का परिचय भेजा है। वह परिचय आर्य हरीश कौशल पुरी द्वारा १८ जुलाई २००८ का लिखा है। संयोग से इस लेख पर उनका पता और दूरभाष संख्या भी अंकित है। मैंने लेखन की प्रामाणिकता के लिये उनसे सम्पर्क किया तो उन्होंने केवल इतना स्वीकार किया कि इसकी प्रामाणिकता बस इतनी है कि श्री रघुनाथ प्रसाद कोतवाल के पौत्र स्वामी केवलानन्दजी ने अपनी स्मृति और परिवार में चली आ रही बातों के आधार पर जो बोला, मैंने उसे लिख दिया, इससे अधिक मेरी कोई प्रामाणिकता नहीं है। मैंने स्वामीजी से सम्पर्क कर इसकी प्रामाणिकता को पुष्ट करने का प्रयास किया, परन्तु आयु अधिक होने के कारण वे प्रश्नों के उत्तर के स्थान पर अपनी बात को ही दोहराते

रहे। यह बात कराने में इनके डॉ. पुत्र का योगदान रहा।

जो परिचय अशोक त्रिपाठीजी ने भेजा है। उसमें योगी का आत्मचरित वाली शैली है, जिसको प्रमाणित नहीं किया जा सकता। इस लेख में समय और स्थान में समन्वय नहीं है, अतः उस लेख को यथावत् प्रकाशित न करके उस सामग्री का उपयोग करते हुए ये पंक्तियाँ लिखी हैं। रघुनाथ प्रसाद कोतवाल का जन्म २८ जनवरी १८२६ को उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले के मेहनगर गाँव में हुआ था। आपके पिता का नाम श्री महावीर प्रसाद तथा माता का नाम श्रीमती वसुन्धरा पाण्डेय था। ये भारद्वाज गोत्रीय सरयू पारी ब्राह्मण थे। रघुनाथ पाण्डेय ने १२वीं की शिक्षा लखनऊ से पूरी की। इनको तत्काल ही पुलिस विभाग में नौकरी मिल गई। सर्वप्रथम इनकी नियुक्ति देहरादून में हुई फिर उनको सी.आई.डी. इंस्पेक्टर बनाकर कानपुर भेजा गया। ये सरकार के विश्वासपात्र कर्मचारी थे। आगे चलकर इनका कार्य क्षेत्र कानपुर से लेकर बुन्देलखण्ड तक बढ़ा दिया गया। इनकी सेवा से प्रसन्न होकर अंग्रेज सरकार ने रघुनाथ प्रसाद कोतवाल को राय की उपाधि से सम्मानित किया, परन्तु रघुनाथ प्रसाद कोतवाल ने इस उपाधि का नाम के साथ कभी प्रयोग नहीं किया, क्योंकि ऐसा करने में उन्हें गर्व के स्थान पर अपमान का अनुभव होता था।

ऋषि दयानन्द रघुनाथ प्रसाद कोतवाल से बहुत प्रेम करते थे। एक दिन वे अपने धर्मपत्नी रामप्यारी पाण्डेय के साथ महर्षि से मिले, तब स्वामी जी ने दोनों को वेदोपदेश देकर वेदानुसार जीवन जीने की प्रेरणा दी। उसी के अनुसार उनके परिवार में आर्य परम्परा का निर्वाह किया जा रहा है, कोतवाल जी के पुत्र श्री मिश्रीलालजी तथा उनके पुत्र मेवालालजी आज तक श्रद्धापूर्वक परिवार में वैदिक धर्म का पालन कर रहे हैं।

कहा जाता है कि स्वतन्त्रता संग्राम के समय इनकी नियुक्ति झाँसी के कोतवाल के रूप में थी, उन्होंने परोक्ष रूप से रानी लक्ष्मीबाई को युद्ध में सहायता भी पहुँचाई थी। इसका कारण था, रघुनाथ प्रसाद के चाचा रघुवीर पाण्डेय झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के सलाहकार थे और रानी के विधवा होने पर रानी को ओजपूर्ण कवितायें और कहानियाँ सुनाकर प्रोत्साहित किया करते थे। महिला सेना के निर्माण में भी इनका योगदान था। इसी प्रकार परिवार के अन्य सदस्य भी स्वतन्त्रता संग्राम में भाग ले रहे थे। रघुनाथ प्रसाद कोतवाल के छोटे चाचा शिवनन्दन, श्रवण कुमार, कुँवरसिंह के साथ लड़ाई में शामिल हुये और कन्धरापुर के पास तमसा के किनारे वीरगति को प्राप्त हुए। कुँवरसिंह युद्ध करते हुए आगे बढ़ते रहे, वे आजमगढ़ के सिधारी पुल पर तमसा नदी के किनारे पहुँचे थे कि उनके हाथ में एक अंग्रेज सिपाही की बन्दूक की गोली लगी, कुँवरसिंह ने तत्काल तलवार से गोली लगा अपना हाथ काट दिया और नदी में प्रवाहित कर दिया। एक हाथ से युद्ध करते हुए बक्सर होते हुये, अपने गाँव जगदीशपुर पहुँचे। ८५ वर्ष की अवस्था में उनका स्वर्गवास हुआ। बाद में उनके सुपुत्र जगदीशसिंह ने मोर्चा सम्भाला और अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध करते रहे।

इस प्रकार रघुनाथ प्रसाद कोतवाल एवं उनके परिवार का जीवन देश की स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये अर्पित हुआ।

रघुनाथ प्रसाद कोतवाल को उनके चाचा ने ही प्रेरणा देकर पुलिस विभाग में भर्ती कराया था और निर्देश दिया था कि तुम्हें अंग्रेजों को प्रसन्न रखते हुए, भारत माता की दासता की जंजीरों को काटना है, जिससे साँप भी मर जाये और लाठी भी न टूटे। रघुनाथ प्रसाद कोतवाल ने और कितने भी कार्य देशहित में किये होंगे, परन्तु काशी में उस दिन काशी के गुण्डों से महर्षि के प्राणों की रक्षा करके जो महान् कार्य किया, उससे बड़ा और कोई कार्य नहीं हो सकता। यह उनकी देश और समाज की सबसे बड़ी सेवा है।

इसके लिये यह देश और समाज उनका सदा ऋणी रहेगा।

मार्च (प्रथम) २०१६ से लिया गया है

मनुष्यों को चाहिये कि सदा यज्ञ का आरम्भ और समाप्ति को करें और संसार के जीवों को अत्यन्त सुख पहुँचावें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६२

संस्था की ओर से....

क्या आप प्रतिदिन अतिथि यज्ञ नहीं कर पाते?
तो आइये, अतिथि यज्ञ के होता बनिये

वैदिक नित्यकर्मों में अतिथि यज्ञ प्रतिदिन करना अनिवार्य है, किन्तु आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं, फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय? इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें, इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन प्रतिवर्ष ५ हजार एक सौ रु. की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशित भी किये जाते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उन्हें उनके जन्मदिवस आदि पर परोपकारिणी सभा की ओर से दूरभाष द्वारा आशीर्वाद प्रदान किया जायेगा। यदि उस शुभ अवसर पर वे स्वयं उपस्थित होकर यजमान बनें तो यह सर्वोत्तम होगा।

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

परोपकारिणी सभा की गतिविधियाँ

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित उनकी उत्तराधिकारिणी सभा है और केवल नाम से ही नहीं, बल्कि अपने कार्यों से भी वह ऋषि के उत्तराधिकार के दायित्व को पूर्णतया निभा रही है। महर्षि दयानन्द सरस्वती

ने इस सभा की स्थापना के समय तीन उद्देश्य रखे थे।

१. वेदादि सत्यशास्त्रों का प्रकाशन २. विद्वान् उपदेशक तैयार करके देश-विदेश में वैदिक धर्म का प्रचार एवं ३. आर्यावर्त्तीय दीन-दरिद्रों की सेवा।

इन सभी कार्यों को सभा अपने विभिन्न प्रकल्पों के माध्यम से पूरा करने में सर्वसामर्थ्य से लगी हुई है। यद्यपि सभा के पास आर्थिक आय का कोई स्थाई माध्यम नहीं है, पुनरपि ऋषिभक्तों एवं आर्यजनों के सहयोग और विश्वास पर ही सभा ने बड़े-बड़े कार्यों को प्रारम्भ किया और निरन्तर कर भी रही है। आचार्य डॉ. धर्मवीर जी, जो कि वर्तमान में परोपकारिणी सभा के प्रधान एवं मूल स्तम्भ थे, उनका कहना था कि **''कार्य यदि अच्छा है तो उसे प्रारम्भ कर देना चाहिये, सहयोग तो स्वयं ही मिल जाता है।''** यही शैली अपनाकर आज भी वैदिक विचार के प्रचार का कार्य निरन्तर जारी है। डॉ. धर्मवीर जी के जाने से सभा को बड़ा आघात अवश्य लगा है, परन्तु आर्यों का स्नेह, भरोसा उनके द्वारा प्रारम्भ किये गये कार्यों को रुकने नहीं देगा-ऐसा सभा को पूर्ण विश्वास है।

परोपकारिणी सभा आज अनेक कार्यों, माध्यमों से इस वेद प्रचार यज्ञ में लगी है, जिसकी सूची यहाँ दी जा रही है-

भव्य ऋषि उद्यान आश्रम, अतिथि यज्ञ, भोजनशाला, गौशाला, वानप्रस्थ एवं संन्यासाश्रम, गुरुकुल, परोपकारी पत्रिका, प्रकाशन, योग साधना एवं चरित्र निर्माण शिविर, सत्यार्थ प्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र का नि:शुल्क वितरण, पाण्डुलिपियों का डिजिटलाइजेशन, पुस्तकालय, औषधालय, देश-देशान्तरों में वेद-प्रचार, आयुर्वेदिक औषधालय।

गुरुकुल के लिये प्रवेश-सूचना

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान-अजमेर में वैदिक धर्म एवं आर्यसमाज के उपदेशक तैयार करने हेतु उपदेशक कक्षा में प्रवेश प्रारम्भ हैं।

प्रवेशार्थी की न्यूनतम आयु १४ वर्ष तथा कक्षा आठ या उससे अधिक उत्तीर्ण हो। आर्ष-पद्धति से व्याकरण, दर्शन तथा महर्षि निर्दिष्ट पाठ्यक्रम के अध्यापन की व्यवस्था है।

गुरुकुल में अध्यापन, भोजन एवं आवास की नि:शुल्क व्यवस्था है।

प्रवेश के इच्छुक अभ्यर्थी सम्पर्क करें-

आचार्य, आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, पुष्कर रोड, अजमेर।

दूरभाष- ०१४५-२४६०१६४, ०१४५-२६२१२७०

परोपकारिणी सभा के प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

दानदाताओं की सूची

अतिथि यज्ञ के होता

(१ से १५ अक्टूबर २०१९ तक)

१. श्रीमती पुष्पा देवी, मुजफ्फरनगर २. श्रीमती ओमलता चौहान, कोटा ३. श्री अमित कुमार, बागपत ४. श्री बलवीर आर्य, करनाल ५. श्री वासुदेव आर्य, अजमेर ६. स्वामी प्रवासानन्द, अजमेर ७. श्री रमाकान्त पारीक, जयपुर ८. श्री अशोक कुमार कक्कड़, कल्याण ९. श्री सौरभ नायक, हैदराबाद १०. श्रीमती शीला भोगले, होशंगाबाद ११. श्री राजेन्द्रसिंह, नई दिल्ली १२. श्रीमती सुयशा भास्कर सेन गुप्ता, अमेरिका।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गोशाला संचालित है। गोशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गो-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गोशाला के दानदाता

(१ से १५ अक्टूबर २०१९ तक)

१. श्रीमती स्नेहलता, अम्बाला सिटी २. श्रीमती ओमलता चौहान, कोटा, ३. श्री रामसिंह यादव, बीकानेर ४. श्री अमित कुमार, बागपत ५. श्री नेपालसिंह, शामली ६. श्री ओमपालसिंह आर्य, करनाल ७. श्रीमती राजश्री उबाना, अजमेर ८. श्री पूर्णचन्द मित्तल, कोटा ९. श्री रामनारायण कुशवाहा, कोटा १०. श्री सुमेरसिंह शेखावत, भिवानी ११. श्री नीरज राणा, मुजफ्फरनगर १२. माता सरोज देवी, अजमेर १३. श्री सुशान्त साहु, भुवनेश्वर १४. श्री कृष्णकुमार शर्मा, अलवर १५. श्री दीपक वर्मा, अजमेर १६. श्री सौरभ नायक, हैदराबाद १७. श्री प्रभात नायक, नागपुर १८. श्रीमती सुयशा भास्कर सेन गुप्ता, अमेरिका १९. श्री बलवानसिंह वैश्य, झज्जर, २०. श्री माणकचन्द जैन, छोटी खाटू।

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

०१, ०२, ०३ नवम्बर २०१९- **ऋषि मेला**

ऋषि उद्यान में होने वाले कार्यक्रमों के लिए

सम्पर्क सूत्र- ०९४६०४२११८३, ०१४५-२४६०१६४, ०१४५-२६२१२७०

अग्नि और जल संसार के सब व्यवहारों के कारण हैं, इससे गृहस्थजन विशेषकर अग्नि और जल के गुणों को जानें और गृहस्थ के सब काम सत्य व्यवहार से करें।

महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२४

जब तक सबकी रक्षा करने वाला धार्मिक राजा वा आप्त विद्वान् न हो तब तक विद्या और मोक्ष के साधनों को निर्विघ्नता से पाने के योग्य कोई भी मनुष्य नहीं होता है और न मोक्ष सुख से अधिक कोई सुख है।

महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५२

परोपकारिणी सभा, अजमेर के तत्त्वावधान में
१३६ वाँ ऋषि बलिदान समारोह
दिनांक १, २, ३ नवम्बर २०१९, शुक्र, शनि, रविवार

विराट् व्यक्तित्त्व महर्षि दयानन्द की समग्र मानव जाति ऋणी है। इस ऋण को चुकाने का स्वर्ण-अवसर ऋषि के १३६वें बलिदान वर्ष के उपलक्ष्य में हमको प्राप्त हुआ है। इस अवसर पर परोपकारिणी सभा भव्य समारोह का आयोजन करने जा रही है।

यजुर्वेद पारायण यज्ञ- 'यजुर्वेद पारायण यज्ञ' की पूर्णाहुति बलिदान समारोह के अन्तिम दिन ३ नवम्बर को प्रातः १० बजे होगी। यज्ञ के ब्रह्मा आर्यजगत् के प्रतिष्ठित विद्वान् डॉ. विनय विद्यालंकार-प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तराखण्ड होंगे।

वेदगोष्ठी - प्रतिवर्ष की परम्परा के अनुसार इस वर्ष भी अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ दिल्ली एवं अनुसन्धान केन्द्र परोपकारिणी सभा के संयुक्त प्रयास से वेदगोष्ठी का आयोजन किया जायेगा। इस गोष्ठी में देश के विविध विद्वान् अपने शोधपूर्ण मौलिक विचार प्रस्तुत करेंगे। इस वर्ष वेदगोष्ठी का विचारणीय बिन्दु है- **वेद वर्णित ईश्वर-स्वरूप एवं नाम (ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव)।** जो विद्वान् गोष्ठी में शोधपत्र प्रेषित करना चाहते हैं, वे १० अक्टूबर तक सभा के पते पर प्रेषित करवा देवें। १, २, ३ नवम्बर को ऋषि बलिदान समारोह के कार्यक्रमों के साथ-साथ वेदगोष्ठी भी चलती रहेगी। ऋषि-भक्त इसे सुनने का लाभ उठा सकते हैं।

चतुर्वेद कण्ठस्थीकरण प्रतियोगिता- प्रतिवर्ष आयोजित की जाने वाली इस प्रतियोगिता में २१ वर्ष तक के छात्र भाग ले सकते हैं। किसी भी वेद को आद्योपान्त स्मरण करके इस प्रतियोगिता में भाग लिया जा सकता है। जो छात्र जिस वेद पर गत वर्षों में पारितोषिक ग्रहण कर चुके हैं, वे उस वेद से अतिरिक्त वेद स्मरण करके भाग ले सकते हैं। २ नवम्बर को परीक्षा एवं ३ नवम्बर को पुरस्कार-वितरण का कार्यक्रम होगा। जो छात्र इस प्रतियोगिता में भाग लेना चाहते हैं, वे अपने-अपने गुरुकुलों, आश्रमों, संस्थानों से आचार्य द्वारा अधिकृत पत्रक पर २-छायाचित्र सहित अपना परिचय १० अक्टूबर, २०१९ तक आचार्य महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, अजमेर के पते पर भेज दें।

सम्मान - प्रतिवर्ष विशिष्ट वैदिक विद्वान्, विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को इस समारोह में सम्मानित किया जाता है। इस वर्ष भी सम्मान -समारोह होगा। जिसमें अनेक विद्वान्-विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को सम्मानित किया जायेगा।

नवम्बर के आरम्भ में अजमेर में हल्की ठंड होने लगती हैं, ऋषि उद्यान खुले में होने से सर्दी का प्रभाव कुछ अधिक रहेगा। रात्रि में कम्बल ओढ़ने जैसी ठण्ड रहेगी। जो समूह में रहना चाहते हैं उनकी निवास व्यवस्था ऋषि उद्यान में होगी और जो अपने निवास की व्यवस्था होटल-धर्मशाला में करवाना चाहते हैं, कृपया वे सभा कार्यालय से पूर्व सम्पर्क कर अग्रिम राशि जमा करवा कर कमरा आरक्षित करवा लें। सभी से विशेष निवेदन है कि अपने आने की सूचना कम से कम एक सप्ताह पूर्व दे देवें, जिससे संख्या का अनुमान होकर तदनुसार व्यवस्था की जा सके। सभी से निवेदन है कि १३६वें बलिदान समारोह में अपने परिवार व समाज के सभी कार्यकर्त्ताओं सहित पधार कर महर्षि को हार्दिक श्रद्धांजलि प्रदान करें, महर्षि दयानन्द के स्वप्न को साकार करने हेतु प्रेरणा उत्साह प्राप्त कर प्रचार-प्रसार को एक नई चेतना प्रदान करें।

ऋषि मेले में आमन्त्रित विद्वान् एवं विशिष्ट अतिथि- आचार्य देवव्रत-महामहिम राज्यपाल गुजरात, पद्मभूषण महाश धर्मपाल-चैयरमेन एम.डी.एच., श्री सुरेश अग्रवाल-प्रधान सार्वदेशिक सभा, स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती-गुरुकुल गौतम नगर, देहली, स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती-मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा, उ.प्र., श्री धर्मपाल आर्य-प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली, श्री विनय आर्य-मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली, प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु-अबोहर, प्रो. सुरेन्द्र कुमार-पूर्व कुलपति, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, श्री तपेन्द्र वेदालंकार-(रि. आई.ए.एस.) जयपुर, आचार्य सत्यानन्द वेदवागीश, आचार्य विरजानन्द दैवकरणि-झज्जर, श्री दीनदयाल गुप्त-कोलकाता, श्री शत्रुघ्न आर्य-राँची, श्री सत्यानन्द आर्य-दिल्ली, डॉ. राजेन्द्र विद्यालंकार-कुरुक्षेत्र, प्रो. महावीर अग्रवाल-पूर्व कुलपति, उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय, प्रो. कमलेश चौकसी-अहमदाबाद, डॉ. रामप्रकाश वर्णी-एटा, डॉ. ज्वलन्त शास्त्री-अमेठी, श्री जगदीश शर्मा-जयपुर, श्री शिवकुमार चौधरी-इन्दौर, श्री जयदेव आर्य-राजकोट, श्री ठा. विक्रमसिंह-दिल्ली, आचार्य विजयपाल-झज्जर, श्री सज्जनसिंह कोठारी-पूर्व लोकायुक्त जयपुर, श्री विजयसिंह भाटी-जोधपुर, श्री इन्द्रजित् देव-यमुनानगर, आचार्य विद्यादेव, श्री पुनीत शास्त्री- मेरठ, आचार्य घनश्यामसिंह, आचार्य श्यामलाल, डॉ. रघुवीर वेदालंकार-दिल्ली, स्वामी ऋतस्पति-होशंगाबाद, आचार्या सूर्या देवी-शिवगंज, आचार्य ओम्प्रकाश-आबूपर्वत, मा. रामपाल आर्य-प्रधान आ.प्र.स. हरियाणा, डॉ. महावीर मीमांसक-दिल्ली, डॉ. उषा शर्मा 'उषस', श्री विजय शर्मा- भीलवाड़ा, डॉ. जगदेव-रोहतक, पं. रामनिवास गुणग्राहक-श्रीगंगानगर, श्री राजवीर आर्य, डॉ. मुमुक्षु आर्य-नोएडा, पं. सत्यपाल पथिक, पं. भूपेन्द्र सिंह, श्रीपाल आर्य।

इस समारोह हेतु आपका आर्थिक सहयोग आयकर की धारा '८०-जी' के अन्तर्गत दिए गये प्रावधान के अनुरूप कर मुक्त होगा। विदेश में निवास कर रहे धर्मप्रेमी सज्जन स्वदेश में होने वाले इस समारोह हेतु मुक्त हस्त से दान देकर देश का गौरव बढ़ाएँ। सभा को भारतीय शासन द्वारा विदेशों से दानस्वरूप दी गई राशि को प्राप्त करने की छूट प्राप्त है। आपका सहयोग ही हमारा सम्बल है। शुभकामनाओं सहित।

डॉ. वेदपाल — **कन्हैयालाल आर्य**

प्रधान — **मन्त्री**

वेदगोष्ठी–२०१९
विषय– वेद वर्णित ईश्वर–स्वरूप एवं नाम (ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव)
उपविषय

०१. ईश्वर के मुख्य निज नाम 'ओ३म्' तथा अन्य गौण नामों का वैशिष्ट्य और महत्त्व।
०२. महाव्याहृतियों (भूः, भुवः, स्वः) के आलोक में ईश्वर के स्वरूप की विवेचना।
०३. ईश्वर के सच्चिदानन्दस्वरूप की विवेचना।
०४. ईश्वर की 'सर्वशक्तिमत्ता' की विवेचना।
०५. ईश्वर के गुणों (निराकारत्व, दयालुता, न्यायकारित्व इत्यादि) का विवेचन।
०६. ईश्वर का कर्तृत्व-विवेचन।
०७. वेदों का उत्पत्तिकर्त्ता परमेश्वर (शास्त्रयोनित्वात्)
०८. ज्ञान-विज्ञान का जनानेहारा आद्यगुरु परमेश्वर (स एष पूर्वेषामपि गुरु...)
०९. ईश्वर की सगुण-निर्गुणता का स्वरूप।
१०. प्रकृति व जीव से परमात्मा से पार्थ क्या।
११. भूत-भविष्य-वर्तमान का ज्ञाता परमेश्वर।
१२. ईश्वर की प्रतिमा, साकारत्व, अवतार इत्यादि की निषधक श्रुतिभेद की विवेचना।
१३. 'पुरुषसूक्त' में ईश्वर का स्वरूप।
१४. 'ईश्वरसिद्धि' की विवेचना।
१५. ईश्वर की महिमा, कर्म और स्वभाग।
१६. ईश्वर-प्राप्ति अर्थात् वेदोक्त ईश्वरोपासना।
१७. ईश्वर-प्राप्ति के उपाय/मार्ग-ज्ञान, कर्म, उपासना इत्यादि की विवेचना।

भूल-सुधार

परोपकारी के सितम्बर प्रथम २०१९ अंक में प्रकाशित लेख ''बचेगा कौन यदि राष्ट्र ही मर जाये?'' जिसके मूल लेखक श्री पी.के. चटर्जी हैं। यह लेख अंग्रेजी में who Lives if the Nation Dies? के नाम से प्रकाशित हुआ था। परोपकारी में प्रकाशित लेख इसका हिन्दी अनुवाद है। अनुवाद का कार्य श्री चाँदरतन दम्मानी (कोलकाता) ने किया है। यह जानकारी लेख के साथ प्रकाशित नहीं हो पाई थी, इसके लिए खेद है। **- सम्पादक**

ऋषि मेला २०१९ हेतु स्टॉल आवंटन

प्रति वर्ष की भांति इस वर्ष ऋषि मेला १, २, ३ नवम्बर शुक्र, शनि, रविवार २०१९ को ऋषि उद्यान में आयोजित होगा। उसमें आर्य जगत् का साहित्य, हवन सामग्री, अन्यान्य सामग्री की स्टॉल लगती हैं। प्रति स्टॉल किराया १००० रु. निर्धारित है। जिसकी राशि पहले जमा होगी उसी क्रम से स्टॉल का आवंटन होगा। जिन महानुभावों को जितनी स्टॉल की आवश्यकता है, उसी अनुरूप राशि बैंक ड्राफ्ट द्वारा या नकद जमा करावें।

स्टॉल सुविधाः- कारपेट, दो टेबल, दो कुर्सी, २ ट्यूब लाइट प्रति स्टॉल। **स्टॉल साइज**- ७.५×१५ फीट।

ध्यातव्य- १. स्टॉल में रखी टेबल, कुर्सी आदि पूर्व निर्धारित सामग्री को इधर-उधर या अन्य स्टॉल में न बदलें। **२.** अतिरिक्त सामग्री की आवश्यकता हो तो टैन्ट हाउस के कर्मचारी से सम्पर्क कर प्राप्त करें तथा निर्धारित राशि तुरन्त भुगतान करें। **३.** बिस्तर, रजाई, चादर, तकिया को टेन्ट हाउस कर्मचारी से प्राप्त कर निर्धारित राशि जमा करा दें। **४.** स्टॉल व्यवस्थापक से स्टॉल संख्या, राशि की रसीद दिखाकर प्राप्त करें। बिना पूर्व अनुमति के स्टॉल में सामान न रखें, न अधिकृत करें। **५.** आपके सक्रिय सहयोग व अनुशासन की अपेक्षा है। अनियमितता को स्थान न देवें। ६. अपना मोबाइल (चलभाष) नवम्बर देना अति आवश्यक है। ७. आप अपना स्थाई पता अवश्य देवें। ८. स्टॉल में आप पुस्तकें/दवाइयाँ/अन्य सामग्री का उल्लेख अवश्य करें। ९. स्टॉल आवंटन हेतु अग्रिम राशि जमा करावें, अन्यथा विचार सम्भव नहीं होगा। १०. एक पासपोर्ट फोटो भिजवावें, जो परिचय पत्र के साथ अंकित हो। उसमें स्टॉल आवंटन संख्या भी अंकित किया जाएगा। ११. स्टॉल आवंटन की सूचना निर्धारित अवधि में दी जायेगी। **नोटः**- किसी प्रकार का अवैदिक साहित्य एवं सामग्री न हो अन्यथा उचित कार्यवाही सम्भव होगी।

'सत्यार्थ प्रकाश' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति

महर्षि दयानन्द सरस्वती का अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' आर्यों का ब्रह्मास्त्र है। ऐसा ब्रह्मास्त्र, जिसने अविवेक, पाखण्ड, अन्धविश्वासों का दमन कर समाज में एक नई क्रान्ति 'वैचारिक क्रान्ति' को जन्म दिया। अन्धश्रद्धा, अविवेक और पाखण्ड मानव समाज में सहज ही पनपने वाली समस्या है, इसलिये प्रत्येक काल, प्रत्येक स्थान और प्रत्येक परिस्थिति में इन समस्याओं के उन्मूलन की आवश्यकता है-अत: 'सत्यार्थ प्रकाश' की आवश्यकता भी सदैव ही अनिवार्य रहेगी, परन्तु यह विचार जन-जन तक पहुँचे, तो ही लाभकारी होगा। इसी को ध्यान में रखते हुए परोपकारिणी सभा ने ६ वर्ष पूर्व 'विश्व पुस्तक मेला' दिल्ली में प्रतिवर्ष 'सत्यार्थप्रकाश' के साथ 'महर्षि का जीवन-चरित्र' एवं 'आर्याभिविनय' पुस्तक का नि:शुल्क वितरण करने की योजना बनाई, जो निरन्तर चल रही है। इस कार्य के परिणाम भी बहुत सुखद रूप में सामने आये हैं। पुस्तक में कई व्यक्ति आकर कहते हैं कि हमारे पास यह पुस्तक है, हम पिछले वर्ष ले गये थे।

प्रत्येक आर्यमात्र की यह इच्छा होगी कि वह भी इस ग्रन्थ को वितरित कर पुण्य का भागी बने। इसके लिये सभा प्रत्येक आर्य को इस महायज्ञ में सम्मिलित करना चाहती है। प्रत्येक व्यक्ति यज्ञ में अपनी आहुति दे तो यज्ञ और अधिक भव्य एवं विस्तृत हो जाता है। 'सत्यार्थप्रकाश' के नि:शुल्क वितरण रूपी यज्ञ में अपनी आहुति देने के लिये आप अपने सामर्थ्यानुसार सहयोग दे सकते हैं। परोपकारिणी सभा की ओर से प्रकाशित सत्यार्थप्रकाश बड़े अक्षरों में, बढ़िया कागज पर, सजिल्द छापी जाती है, जिससे नये व्यक्ति के लिये भी पुस्तक संग्रहणीय बन जाती है। इस पुस्तक की छपाई में एक प्रति का खर्च लगभग १०० रु. आता है। **यदि कोई व्यक्ति अपनी सात्त्विक भावना से केवल २० पुस्तकें (इससे अधिक कितनी भी) ही वितरित करवाना चाहता है, तो सभा उतनी प्रतियों पर दानी व्यक्ति का नाम छपवाकर वितरित करेगी। इसी प्रकार ३०, ५०, १०० आदि।**

१०० रु. प्रति के अनुसार आप दान देकर अपनी ओर से, अपने नाम से पुस्तक वितरित करा सकते हैं। आहुतियाँ जितनी अधिक होंगी, यज्ञ का फल भी उतना ही अधिक होगा।

अपने दान के साथ 'सत्यार्थप्रकाश वितरण' अवश्य लिख देवें, और साथ ही अपना नाम एवं पता भी। यह दान आप परोपकारिणी सभा के खाते में ऑनलाइन, चैक द्वारा या फिर परोपकारिणी सभा के पते पर मनिऑर्डर भी कर सकते हैं। यह यज्ञ आपका है, प्रत्येक आर्य का है। अत: प्रत्येक आर्य इसमें अपनी आहुति अवश्य दे।

न्यूनतम	२० प्रतियाँ	२१००/- रु.
	३० प्रतियाँ	३१००/- रु.
	५० प्रतियाँ	५१००/- रु.
	१०० प्रतियाँ	११०००/- रु.
	५०० प्रतियाँ	५१०००/- रु.
	१००० प्रतियाँ	१,००,०००/- रु.

इस प्रकार जितनी अधिक प्रतियाँ बाँटना चाहें, उतनी और दूरभाष संख्या के साथ भेज देवें। दान अक्टूबर माह के अन्त तक भिजवा देवें, ताकि प्रतियों की संख्या निर्धारित करके उन पर दानदाताओं का नाम अंकित किया जा सके। धन्यवाद। **मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर**

लेखकों से निवेदन

- लेखक कृपया अपने मौलिक व अप्रकाशित लेख ही भेजें।
- लेखक अपना पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या लेख के साथ अवश्य लिखें।
- परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।
- अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटायी नहीं जाती हैं।
- रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।
- स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। -**संपादक**

❋ कार्यक्रम ❋

शुक्रवार, दिनांक १ नवम्बर, २०१९

०५.०० से ०६.३० तक – सूक्ष्म क्रियाएँ–आसन–प्राणायाम–ध्यान–सन्ध्या

०७.०० से ०९.०० तक – यज्ञ, वेदपाठ। ब्रह्मा– डॉ. विनय विद्यालंकार

०९.०० से ०९.३० तक – वेद प्रवचन– डॉ. सूर्यादेवी चतुर्वेदा

०९.३० से १०.०० तक – प्रातराश

१०.०० से ११.०० तक – **ध्वजारोहण व उद्घाटन सत्र**

११.०० से १२.३० तक – **आधुनिक शिक्षा और राष्ट्रवाद**

१२.३० से ०२.०० तक – भोजन, विश्राम

०२.०० से ०५.०० तक – **भजन–प्रवचन–सम्मान मानव निर्माण और आर्यसमाज**

०६.०० से ०८.०० तक – यज्ञ, सन्ध्या व भोजन

०८.०० से १०.०० तक – **नारी और आर्यसमाज, भजन–प्रवचन–सम्मान**

शनिवार, दिनांक २ नवम्बर, २०१९

०५.०० से ०६.३० तक – सूक्ष्म क्रियाएँ–आसन–प्राणायाम–ध्यान–सन्ध्या

०७.०० से ०९.०० तक – यज्ञ, वेदपाठ। ब्रह्मा – डॉ. विनय विद्यालंकार

०९.०० से ०९.३० तक – वेद प्रवचन–

०९.३० से १०.०० तक – प्रातराश

१०.०० से १२.३० तक – **भजन–प्रवचन–सम्मान – आर्यसमाज की प्रासंगिकता**

१२.३० से ०२.०० तक – भोजन व विश्राम

०२.०० से ०५.०० तक – **भजन–प्रवचन–सम्मान, महर्षि दयानन्द की विश्व को देन**

०६.०० से ०८.०० तक – यज्ञ–सन्ध्या व भोजन

०८.०० से १०.०० तक – **वेद–प्रचार सम्मेलन, भजन–प्रवचन–सम्मान**

रविवार, दिनांक ३ नवम्बर, २०१९

०५.०० से ०६.३० तक – सूक्ष्म क्रियाएँ–आसन–प्राणायाम–ध्यान–सन्ध्या

०७.०० से ०९.३० तक – यज्ञ, वेदपाठ, **पूर्णाहुति**, ब्रह्मा–डॉ. विनय विद्यालंकार

०९.३० से १०.०० तक – वेद प्रवचन

१०.०० से १०.३० तक – प्रातराश

१०.३० से १२.३० तक – **भजन–प्रवचन–सम्मान – समाज सुधार में युवाओं की भूमिका**

१२.३० से ०२.०० तक – भोजन व विश्राम

०२.०० से ०५.०० तक – **भजन एवं प्रवचन, – वर्तमान में गुरुकुलों की प्रासंगिकता,**

०६.०० से ०८.०० तक – यज्ञ–सन्ध्या व भोजन

०८.०० से १०.०० तक – **धन्यवाद व समापन सत्र**

वेद–गोष्ठी

विषय : **वेद वर्णित ईश्वर–स्वरूप एवं नाम**

स्थान : **ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर**

१ नवम्बर : उद्घाटन सत्र – ११.०० से १२.३० तक

: द्वितीय सत्र – ०२.३० से ०५.०० तक

२ नवम्बर : तृतीय सत्र – १०.०० से १२.३० तक

: चतुर्थ सत्र – ०२.३० से ०५.०० तक

३ नवम्बर : समापन सत्र

ऐतिहासिक कलम से....

वेद में स्त्रियों की स्थिति

पं. यशःपाल सिद्धान्तालंकार

यह लेख स्व. श्री यशःपाल जी सिद्धान्तालंकार की पुस्तक 'वैदिक सिद्धान्त' से लिया गया है। पं. सिद्धान्तालंकार जी आचार्य रामदेव (गुरुकुल कांगड़ी) के सुपुत्र थे। उन्हें आचार्य रामदेव जी की सैद्धान्तिक विचारधारा विरासत में मिली। यह लेख उसी विरासत का एक अंश है। यह लेख लोगों के मनोभावों को परिवर्तित कर वेद का प्रकाश फैलाने में सफल होना, ऐसा हमारा विश्वास है। -सम्पादक

जातिं तु बादरायणोऽधिकृतां मन्यते स्म। किन्तर्हि स्वर्गकाम शब्देनोभावपि स्त्रीपुंसावधिक्रियेते इति। अतो न विवक्षितं पुल्लिंगमिति। कुतः। अविशेषात् स्वर्गे कामो यस्य तमेष लक्षयति शब्दः, तेन लक्षणेनाधिकृतो यजेतेति शब्देन उच्यते। तत्र लक्षणमवशिष्टं स्त्रियां पुंसि च। तस्माच्छब्देनोभावपि स्त्रीपुंसावधिकृताविति गम्यते।

अर्थात् व्यासदेव जाति को अधिकृत मानते हैं। इससे क्या? स्वर्ग की कामनावाला यज्ञ करे। यहाँ स्वर्गकाम शब्द से दोनों स्त्री-पुरुष यज्ञादिक में अधिकारी होते हैं। इसलिये पुल्लिंग विवक्षित नहीं है। क्यों? अविशेष होने से। जिनकी स्वर्ग-कामना हो उनको ही शब्द लक्ष्य कर रहा है। उस लक्षण से अधिकृत योग करे, यह भाव शब्द से विवक्षित है। यहाँ स्त्री-पुरुष दोनों में स्वर्ग-कामनारूप लक्षण समान है। 'तस्मात्' इस शब्द से स्त्री-पुरुष को यज्ञ में समान अधिकार है, यह सुविदित है।

अन्य संस्कारों में भी पुल्लिंग निर्देश किया है, परन्तु दोनों विवक्षित हैं।

(१) प्राङ्नाभिवर्धनात् पुंसो जातकर्म विधीयते।

मनु. १-२९।

अर्थात् नाभि-छेदन से पूर्व पुरुष का जातकर्म करे। यहाँ भी पुंसः से लड़का तथा लड़की दोनों का ग्रहण होता है।

(२) नामधेयं दशम्यां तु द्वादशां वास्य कारयेत्।

(३) चतुर्थे मासि कर्तव्यं शिशोर्निष्क्रमणं गृहात्। षष्ठेऽन्नप्राशनम्।

यहाँ पर नामकरण में 'अस्य' तथा निष्क्रमण और अन्नप्राशन में 'शिशोः' शब्द पुल्लिंग होने पर दोनों के लिये विवक्षित है। इसी प्रकार-

गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनयनम्
गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भात्तु द्वादशे विशः

इस श्लोक में भी पुल्लिंग का निर्देश होते हुए भी कन्याओं के लिए समान रूप से यज्ञोपवीत का विधान है।

(४)- विवाहकाल में पत्नी का स्वयं वेदमन्त्र पढ़ने का विधान है। श्रौतसूत्र में लिखा है कि

इमं मन्त्रं पत्नी पठेत्। इस मन्त्र को पत्नी पढ़े।

वेदं पत्न्यै प्रादाय वाचयेत्।

पत्नी को वेद देकर पढ़वा ले। शांखायन कल्प में भी आचार्य लिखते हैं-

घृतवन्तं कुलायिनं रायस्पोषं सहसस्त्रिणं वेदो दधातु वाजिनमिति वेदे पत्नी वाचयति।।

शांखा. श्रौ. १.४।

अर्थात् 'घृतवन्तं' आदि वेदमन्त्र वेद में से पत्नी को पढ़वावे।

(५) ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्।

अथर्ववेद ११.७.१८

अर्थात् कन्या ब्रह्मचर्य-सेवन से युवावस्था सम्पन्न पति को प्राप्त होती है। ब्रह्मचर्य का अर्थ सायणाचार्य के शब्दों में-

ब्रह्म वेदः तदध्ययनार्थं आचार्यं आचरणीयं समिदाधानभैक्ष्यचर्योर्ध्वरेतस्कत्वादिकं ब्रह्मचारिभिरनुष्ठीयमानं कर्म ब्रह्मचर्यम्।

अर्थात् ब्रह्म जो वेद, उसके अध्ययन के लिये आचरण करने योग्य समिदाधान, भिक्षाचर्य, ऊर्ध्ववीर्यता आदि ब्रह्मचारियों के अनुष्ठान करने योग्य जो कर्म, उसे ब्रह्मचर्य कहते हैं। ब्रह्मचर्य का यह अर्थ सायण ने ११.७.१७ के भाष्य में किया है तथा 'तत्र यद् ब्रह्मजन्मास्य मौञ्जीबन्धन

चिह्नितम्' २.१७०।

अर्थात् यज्ञोपवीत से चिह्नित होना यह उसका ब्रह्म अर्थात् वेद में जन्म होना है। तात्पर्य यह है कि वेद पढ़ने के लिए यज्ञोपवीत धारण करना आवश्यक है।

(६) वेदमन्त्रों की द्रष्टा ऋषिकाएँ भी हुई हैं-

नाम	ऋग्वेद मण्डल	सूक्त	मन्त्र
रोमशा	१	२६	७
लोपामुद्रा	१	१७९	१-६
विश्ववारा	५	२८	१-६
शाश्वती	८	१	३८
अपाला	८	९१	१-७
यमी	१०	१०	१,३,५,७,१०,१३
घोषा	१०	३९,४०	१-१८
सूर्या	१०	८५	१-४७
चन्द्राणी	१०	८६	१-२३
उर्वशी	१०	९५	२,४,५,७,११, १३,१५,१६,१८
दक्षिणा	१०	१०७	१-११
सरमा	१०	१०८	२,४,६,८,१०,११
वाक्	१०	१२५	१-८
गोंघा	१०	१३४	७
श्रद्धा	१०	१५१	१-५

(७)- यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्मराजन्याभ्याꣳशूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च।

इस ऋचा में तो स्पष्ट ही स्त्री को वेद पढ़ने का अधिकार दिया गया है।

(८)- प्रावृतां यज्ञोपवीतिनीमभ्युदायन् जपेत् सोमोऽदद्गन्धर्वायेति।

गोभिलीय गृह्यसूत्र- प्र. २-का. १ सूत्र १९।

उत्तरीय वस्त्रादि से आच्छादित तथा यज्ञोपवीत धारण की हुई कन्या को विवाह-मण्डप में लावे।

(९)- पत्नी को यज्ञ में बैठने का भी स्पष्ट अधिकार है।

पत्युर्नो यज्ञसंयोगे।। अष्टाध्यायी ४.१.३३

पतिशब्दस्य नकारादेशः स्याद्यज्ञेन सम्बन्धे।

अर्थात् पत्नी शब्द ही यज्ञ के सम्बन्ध का बोधक है।

सुपत्नी पत्या प्रजावत्या त्वागन् यज्ञः प्रतिकुम्भं गृभाय। अथर्व. ११.१.२

अर्थात् पति के साथ श्रेष्ठतमा पत्नी शोभन पुत्र और प्रजायुक्त होती है। ऐसी पत्नी को यज्ञ प्राप्त होता है।

(१) कामं गृह्योऽवग्नौ पत्नी जुहुतात्सायं प्रातर्होमौ, गृहाः गृह्य एषोऽग्निर्भवतीति।

गोभिल गृ. प्र. १ का. ३.१५

इस पर भाष्यकार लिखता है कि-

पत्नीमध्यापयेत्कस्मात्। पत्नी जुहुयादिति वचनात्। न खल्वनधीत्य शक्नोति पत्नी होतुमिति।।

अर्थात् पत्नी को वेदादि पढ़ाना चाहिये, क्योंकि पत्नी अग्निहोत्र करे यह विधान पाये जाने से बिना पढ़े पत्नी हवन-यज्ञ करने के योग्य नहीं हो सकती।

दम्पती एव-गोभि. गृ. प्र. १ का. ४ सू. १७।

इस पर भाष्यकार चन्द्रकान्त लिखते हैं कि-

गृहपतिस्तत्पत्नी तावुभौ दम्पती एव बलीन् हरयेतामिति

सम्बध्यते। अर्थात् पति-पत्नी दोनों बलिवैश्वदेवादि यज्ञ करें।

(४) मीमांसा दर्शन में-

स्वव्रतोऽस्तु वचनादैककर्म्यं स्यात्। अ. ६-९-१७।

वचनात्तयोः सहक्रिया। एवं हि स्मरन्ति, धर्मे चार्थे च कामे च नातिचरितव्येति।...तत्र यागोऽवश्यं सह पत्न्या कर्त्तव्य इति।। (शाबर भाष्य)

अर्थात् स्त्री-पुरुष दोनों को, एक कर्म के बोधक वचन पाये जाने से दोनों का एक साथ कर्म करने का विधान है। धर्म, अर्थ और काम में स्त्री को पृथक् नहीं करना चाहिये। यह स्मृति आज्ञा है। अतः अवश्य पत्नी के साथ यज्ञ, यागादि करने चाहिये।

पुनः-

फलवत्तां च दर्शयति।। २१ मी. अ. ६। पा. १।। **संपत्नी पत्या सुकृतेन गच्छतां यज्ञस्य धुर्य्ययुक्तावभूताम्। सञ्जानानौ विजहीताम्। अरातीर्दिवि ज्योतिरजरमारभेतामिति दम्पत्योः फलं दर्शयति। तस्मादप्युभौ अधिकृताविति सिद्धम्।।**

अर्थात् पति के साथ पत्नी सुकृत करती चले। दोनों

यज्ञ के वाहक बन जायें। ये दोनों मिलकर आगे बढ़ते रहें। स्वर्ग में अविनाशी ज्योति का दोनों आरम्भ करें। इस प्रकार शास्त्र स्त्री-पुरुष दोनों को एकसाथ कर्म करने का अधिकार देता है।

१०. शंकरदिग्विजय में लिखा है कि-

तत्राधिकारमधिगच्छति सद्वितीयः।
कृत्वा विवाहमिति वेदविदां प्रवादः।। २-१४।

अर्थात् विवाह करके परिणीता पत्नी के साथ पुरुष को यज्ञादि कर्म में अधिकार प्राप्त होता है, ऐसा वेद के जानने वालों का कथन है।

११. इतिहास भी इस बात की साक्षी देता है

(१) **सर्वाणि शास्त्राणि षडंगवेदान्**
काव्यादिकान् वेत्ति परं च सर्वम्
तन्नास्ति नो वेत्ति यदत्र बाला
तस्मादभूच्चित्रपदं जनानाम्। शंकरदिग्विजय।

वह बाला उभया भारती न्याय, वैशेषिक, योग, सांख्य, पूर्वमीमांसा, वेदान्त तथा शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष तथा चारों वेदों और काव्यादि ग्रन्थों में पारंगत थी। ऐसी कोई चीज न थी, जो कि उभया भारती न जानती हो।

(२) ततः स्वस्त्ययनं कृत्वा मन्त्रविद्विजयैषिणी।
अन्तःपुरं सह स्त्रीभिः प्रविष्टाशोकमोहिता
-स. १६-१२ किष्किन्धाकाण्ड

विजय चाहनेवाली और वेदमन्त्र को जानने वाली स्वस्ति अयन करके स्त्रियों के साथ शोकार्त्त अन्तःपुर में दाखिल हुई।

(३) सा क्षौमवसना दृष्टा नित्यव्रतपरायणा।
अग्निजुहोति स्म मन्त्रवत् कृतमङ्गला।।
अयोध्याकाण्ड २०-१४

अर्थात् कौशल्या मन्त्रों सहित अग्निहोत्र कर रही थी।

(४) साहं तस्मिन्कुले जाता भर्तर्यसति मद्विधेः।
विनीता मोक्षधर्मेषु चराम्येका मुनिव्रतम्।।
महाभारत शान्तिपर्व ३२१-८३।

अर्थात् सुलभा राजा जनक के प्रश्न पर उत्तर देती है कि मैं प्रभावशाली क्षत्रियकुल में उत्पन्न हुई हूँ और गुरुओं से मैंने शिक्षा पाई है। ब्रह्मचर्य की समाप्ति पर योग्य पति न मिलने से मैंने नैष्ठिक ब्रह्मचर्य का आश्रय लेकर संन्यासव्रत ग्रहण किया है।

अस्मिन्नगस्त्यप्रमुखाः प्रदेशे
भूयांस उद्गीथविदो वसन्ति।
तेभ्योऽधिगन्तुं निगमान्तविद्यां
वाल्मीकिपार्श्वादिह पर्यटामि।

(५) उपनीय तु यः शिष्यं वेदमध्यापयेद् द्विजः।
सकल्पं सरहस्यं च तमाचार्यं प्रचक्षते। मनु २-१४०।

जैसा आचार्य का लक्षण तथा कर्त्तव्य है उसी प्रकार पुल्लिङ्ग निर्देश जात्यविशेष से स्वयं व्याख्यात्री आचार्या को भी समझना चाहिये। '**आचार्यादणत्वं च**' पर कौमुदीकार लिखता है कि आचार्य की पत्नी आचार्याणी कहलायेगी, परन्तु स्वयं वेद-विद्या पढ़ानेवाली व्याख्यात्री आचार्या कहलायेगी।

कर्नल टाड ने एक स्थान पर लिखा है कि-

" It is universally admitted that there is no better criterion of the refinement of a nation than the condition of the fair sex therein."

अर्थात् यह बात सर्वसम्मत है कि यदि किसी जाति की उन्नति तथा सभ्यता का अन्दाजा लगाना हो तो उस देश की स्त्रियों का अंदाजा लगा लिया जाए। उपर्युक्त उद्धरणों के अध्ययन से यह बात सर्वथा स्पष्ट हो जाती है कि वैदिककाल में हमारे देश में स्त्रियों की स्थिति बहुत उन्नत थी। परिवार में उन्हें लक्ष्मी तथा मूर्धा समझा जाता था। समाज तथा राष्ट्र में उन्हें अत्यन्त सम्मान से देखा जाता था। संसार परिवर्तनशील है। उसको कोई एकरस नहीं बना सकता। आज जो उन्नति के शिखर पर है, कल वही अवनति के गढ़े में पड़ा दिखाई देता है। हमारा देश दिन-प्रतिदिन पराधीन होता गया। भिन्न-भिन्न जातियों के सम्पर्क से समाज के नियमों में दूषणता तथा शिथिलता आती गई। इससे स्त्री-समाज की दशा भी बिगड़ती गयी। मध्यकाल में स्त्रियों की अवस्था अत्यन्त हीन हो गई। लोग वैदिक-मार्ग से विमुख हो गये।

जहाँ अन्य बातों में आर्यजाति गिरावट की तरफ गई, वहाँ स्त्रियों के सम्बन्ध में प्राचीन गौरव तथा मान के भाव

भी लुप्त हो गये और आर्यजाति के सामूहिक पतन के साथ स्त्रियों का पतन हो गया। इसमें हमारे प्राचीन वेदों, शास्त्रों तथा ऋषियों का तनिक भी दोष नहीं है। आर्यजाति के उत्थान के लिये १९ वीं सदी में भारत में एक ऋषि पैदा हुआ। इसने सर्वतोमुखी क्रान्ति करके स्त्रियों को देवी के प्रतिष्ठित पद पर बैठाया और उनके प्राचीन गौरव की रक्षा की। रङ्ग अय्यर ने अपनी Father India नाम पुस्तक में लिखा है कि In the nineteenth century, Rishi Dayanand came as a Massiah to preach the restoration of women to their ancient glory अर्थात् १९ वीं सदी में स्त्रियों की पुरानी महत्ता तथा गौरव को कायम करने के लिये ऋषि दयानन्द ने मसीहा के रूप में जन्म लिया। आज संसार में सर्वतोमुखी जागृति के चिह्न दृष्टिगोचर हो रहे हैं। सदियों से गुलामी की अवस्था में रहने से स्त्री जाति को नाना प्रकार के अत्याचारों को सहन करना पड़ा। अब जबकि सारे विश्व में देवियों में जागृति के चिह्न दिखाई दे रहे हैं और प्राचीन गुलामी के विरुद्ध यूरोप की देवियों ने घोर आन्दोलन शुरु कर दिया है, ऐसे में भारतीय नारी भी इस सम्बन्ध में निष्क्रिय नहीं रह सकती। भारत में भी उसी प्रकार के जागृति के चिह्न दृष्टिगोचर हो रहे हैं। ऐसे परिवर्तन के समयों में प्रायः लाभ के स्थान पर हानियाँ उठानी पड़ती हैं और जातियाँ अपने उद्देश्य से बहुत दूर चली जाया करती है। स्वतन्त्रता के मद में भारतीय नारी भी यूरोप की देवियों के सदृश अपने असली उद्देश्य से विचलित हो रही है। अब तो स्त्री जाति की अवस्था साँप छछून्दर की तरह हो रही है। इधर गढ़ा तो उधर खाई। हमारी सम्मति में वर्तमान सर्वव्यापी आन्दोलन देवियों को गढ़े से निकाल कर खाई में गिरा देगा।

गुरुकुल की ओर से

ब्रह्मचारी मोहित

विश्व का प्रत्येक व्यक्ति सफलता की ओर भागता रहता है। बचपन से लेकर मृत्यु तक उसकी दौड़ कभी रुकती नहीं। किसी को धन, तो किसी को नाम, किसी को स्वास्थ्य, तो किसी को अच्छे सम्बन्ध और किसी को सभी चाहिये। परन्तु कुछ ही गिने-चुने लोग अपनी इच्छाओं की पूर्ति कर पाते हैं। विचारणीय बात यह है कि विश्व में कितने व्यक्ति हारे हुए हैं अर्थात् दुःखी हैं। ऐसा क्यों? क्या कमी है उन व्यक्तियों में। कमी एक ही है- वृत्तियों को अपना स्वरूप मान लेना। जब तक व्यक्ति वृत्तियों के आधीन रहता है उसका अपने जीवन पर नियन्त्रण नहीं रहता। जो अपनी वृत्तियों को वश में रखने का सामर्थ्य रखता है वही सफलता प्राप्त करता है और वही समाधि तक का रास्ता पार कर सकता है।

हमारा मन वश में न होने पर हमें पतन की ओर ले जाता है। इसे एक उदाहरण से स्पष्ट करते हैं। मान लीजिए हमारे खाने की चार वस्तुएँ थाली में रखीं हैं-सेब, नीम की पत्तियाँ, चटपटी चटनी के साथ समोसा और मिट्टी। हमारी बुद्धि देखते ही यह बताती है कि सेब मन के भी अनुकूल है और शरीर के भी, नीम शरीर के अनुकूल है परन्तु मन के नहीं, समोसा मन का प्यारा, परन्तु शरीर के अत्यन्त प्रतिकूल और मिट्टी तो दोनों के प्रतिकूल। इस स्थिति में मन के आधीन व्यक्ति पहले समोसा खायेगा, इसी तरह वह मन के इशारे पर चलने में इतना मग्न हो जाता है कि अपने सम्बन्ध, स्वास्थ्य, धन, बुद्धि, मान-सम्मान तक को दाँव पर लगा देता है और जीवन के अन्त तक खिन्नता से घिरा रहता है और जो मन के अधीन न होकर परिस्थिति अनुसार वर्त्तता है वह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता को प्राप्त करता है।

यहाँ आश्चर्य की बात यह है कि अधिकतर व्यक्ति जानते हैं कि उनका मन उनके वश में नहीं, पर वे यह नहीं जानते कि इसका समाधान क्या है और आश्चर्य की बात तो यह है कि इस विषय में न कोई चर्चा होती है, न इस विषय को महत्त्वपूर्ण समझा जाता है। यह स्थिति अगर ऐसे ही रही तो मनुष्य के साथ-साथ पूरी वसुधा घोर अन्धकार की ओर अग्रसर हो जाएगी। इस भयावह स्थिति का केवल एक ही समाधान है, ''मन, आत्मा, बुद्धि, प्रकृति, ईश्वर, शरीर तथा इन्द्रियों के कार्यों तथा स्वरूप का यथावत ज्ञान। मनुष्य के जीवन को उच्च स्तर पर ले

जाने के लिये ऋषियों ने अनेक ग्रन्थों को रचा और इस ज्ञान को और अच्छे से फैलाने के लिए अनेक गुरुकुलों की स्थापना की गई, परन्तु आज स्थिति यह है कि वे गुरुकुल अधिकतर ऐसे विद्यार्थियों से भरे हैं जो अभाव के कारण स्कूलों में पढ़ नहीं पाते, जो पालकों से संभाले नहीं जा रहे या वे, जो कुछ करने योग्य नहीं रहते। आज समाज में गुरुकुल एक 'डम्पिंग यार्ड' मात्र बनकर रह गये हैं। और ऐसे बच्चे जो योग्य हैं, देश समाज के लिए कुछ अच्छा कर सकते हैं वे अंग्रेजों द्वारा रची शिक्षा-व्यवस्था से शिक्षित किये जाते हैं। इस शिक्षा पद्धति के जनक और ब्रिटिश सरकार के ईमानदार नौकर मैकॉले अपने विवरण पत्र में लिखते हैं " We must st present do our best to form a class of persons who are indian in blood and colour but english in taste, opinions in imorols and intellect" अर्थात् हम वर्तमान में अपनी पूरी ताकत से ऐसे लोगों के वर्ग का निर्माण करें जो कि रंग-रूप से तो भारतीय हों, परन्तु पसन्द-नापसन्द से, मान्यताओं से, आचार-विचार से और समझ से अंग्रेज हों।

इस विवरण पत्र में विस्तार से भारत की भारतीयता को नष्ट करने योजना को समझाते हैं और हम भारतीय पूरी ईमानदारी से उसके सपने को पूरा करने में लगे हुए हैं। एक ऐसी व्यवस्था जो किसी व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक अथवा आत्मिक उन्नति की परवाह तक भी नहीं करती। यहाँ सफल वही है जो दूसरों के सर पर चढ़ कर भौतिक वस्तुओं को प्राप्त कर लेता है और आज का समाज भी इसे उचित समझता है, परन्तु वैदिक-शिक्षण पद्धति में व्यक्ति को हर तरह से परिपक्व बनाने का प्रयत्न किया जाता है। ताकि वह केवल स्वयं की ही नहीं बल्कि पूरे समाज की उन्नति में सहयोगी बने। आज तो परिस्थिति ऐसी है कि जिस आर्यसमाज की वैदिक धर्म के प्रचार के लिए स्थापना की गई थी उसी आर्यसमाज के परिवारों अधिकतर बच्चे गुरुकुल की शिक्षा से वंचित हैं। भारत के विद्यार्थी ऐसे व्यक्ति के हिसाब से पढ़ रहे हैं जिसका उद्देश्य भारत की संस्कृति को जड़ से उखाड़ फेंकना था ना कि उस व्यक्ति के हिसाब से जिसने वैदिक धर्म को पुनर्जीवित करने में अपनी जान तक दे दी। इससे स्पष्ट है कि ब्रिटिश सरकार का एक नौकर हमारे ऋषि दयानन्द को पछाड़ गया और हम आर्यसमाजी उसकी जीत में उसके सहयोगी बन रहे हैं।

महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान,
अजमेर

प्रतिक्रिया

मान्यवर, आपको बधाई देना चाहते हैं कि आपने अगस्त द्वितीय के अंक में मुखपृष्ठ पर अनुच्छेद ३७० की समाप्ति का जो चित्र प्रस्तुत किया, ये किसी और पत्रिका ने नहीं किया। बहुत ही प्रासंगिक और प्रभावशाली चित्र ही पत्रकारिता का आदर्श रूप है। स्वामी जी का चित्र न देते तो अच्छा था। श्री धर्मवीर जी ने भी शायद पार्टी की विचारधारा का परोपकारी में चिन्तन आरम्भ किया था। आपने इस अङ्क में, इससे अगले अङ्क में भी 'सच्चे' हिन्दू समाज के दृष्टिकोण को प्रकट करने का प्रयत्न किया है। और आगे भी करेंगे-ऐसी आशा है। सादर

भवदीय रा.पा. भल्ला

वर्णव्यवस्था से सब मनुष्य उन्नतिशील होते हैं

जिस-जिस पुरुष में जिस-जिस वर्ण के गुण कर्म हों उस-उस वर्ण का अधिकार देना, ऐसी व्यवस्था रखने से सब मनुष्य उन्नतिशील होत हैं। क्योंकि उत्तम वर्णों को निम्न वर्ण में जाने से वर्णों को भय होगा कि हमारे सन्तान मूर्खत्वादि दोषयुक्त होंगे तो शूद्र हो जायेंगे और सन्तान भी डरते रहेंगे कि जो हम उक्त चाल-चलन और विद्यायुक्त न होंगे तो शूद्र होना पड़ेगा और नीच वर्णों को उत्तम वर्णस्थ होने के लिए उत्साह बढ़ेगा। **(स. प्र. स.)**

मनुस्मृति : एक परिचर्चा

पण्डित लेखराम वैदिक मिशन एवं महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास के संयुक्त तत्त्वावधान में महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन के सभागार में १५.०९.२०१९ को सौहार्दपूर्ण वातावरण में 'मनुस्मृति परिचर्चा' आयोजित की गई।

संगोष्ठी के 'मनुस्मृति में शूद्र सम्मान' विषयक प्रथम सत्र में परिचर्चा के आरम्भ में पूर्व पक्ष प्रस्तुत करते हुए १७ बार मनुस्मृति का अनुशीलन करने वाले विशिष्ट वक्ता जयनारायण विश्वविद्यालय के प्रो. अवतारलाल मीणा ने कहा कि भारतीय समाज में दो धाराएँ रही है- पहली अवर्णीय एवं दूसरी सवर्णीय या चतुर्वर्णीय धारा। आर्यों को आक्रान्ता मानते हुए वनों, पर्वतों आदि स्थानों पर शरण लेने वालों को अवर्णी बताते हुए कहा कि आर्य लोग साथ में स्त्रियों को नहीं लाए थे। अत: शूद्र के रूप में यहाँ के पुरुषों के साथ स्त्रियों को भी दोयम मानकर प्रताड़ित किया। मनुस्मृति के अध्याय १ से ४ का विशद और अध्याय ८ तक से उन्होंने वे उद्धरण प्रस्तुत किए जिनके आधार पर भारतीय समाज में शूद्र और नारी वर्ग पर सिर्फ जन्म और लिंग के आधार पर अकथनीय अत्याचार किए गए।

परिचर्चा के मुख्य वक्ता, मनुस्मृति के प्रामाणिक अध्येता, विश्लेषक और भाष्यकार गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति प्रो. सुरेन्द्र कुमार ने महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज द्वारा किए गये अछूतोद्धार एवं सामाजिक समरसता और उनके द्वारा उठाए गए अनेकों कष्टों की पृष्ठभूमि में पूर्वपक्ष के आक्षेपों को जन्मना जातिवाद पर आधारित बताया जो कि गुणकर्माधारित मनुस्मृति द्वारा दी गई व्यवस्था के विरुद्ध है। उन्होनें मनुस्मृति के ही उद्धरण देते हुए स्थापित किया कि मनुस्मृति शूद्र के किसी अपराध में जितने दण्ड का निर्धारण करती है, उसी अपराध में वैश्य पर दोगुना. क्षत्रिय पर चौगुना और ब्राह्मण पर आठ गुना से लेकर सोलहगुना तक दण्ड का विधान करती है। शतपथ के उद्धरण से उन्होंने बताया कि मूल में तो एक ही वर्ण ब्राह्मण ही था। किन्तु आवश्यक होने से दूसरा क्षत्रिय, फिर वैश्य और अंत में शूद्र वर्ण बनाया गया, तब समाज व्यवस्था पूर्ण हुई। अत: सभी वर्ण ब्राह्मण वर्ण से ही नि:सृत है। गुणकर्माधारित इसी व्यवस्था का नाद श्रीकृष्ण ने भी '**गणकर्मविभागश:...**' कहकर किया।

सत्र के अध्यक्ष और महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी श्रीमती परोपकारिणी सभा के प्रधान डॉ. वेदपाल जी ने पूर्वपक्ष द्वारा की गई अन्याय सम्बन्धी आपत्तियों को भारतीय परंपरा की ऐतिहासिक सच्चाई बताते हुए, हमारे ग्रन्थों में मिलावट को स्वार्थी लोगों की करतूत बताया और प्रक्षेपों को पहचानकर दूर करना अत्यावश्यक भी।

'मनुस्मृति में नारी सम्मान' विषयक द्वितीय सत्र के आरम्भ में जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग की पूर्व अध्यक्ष डॉ. प्रभावती चौधरी ने मनुस्मृति में सारे विरोध नारी के लिए और विधान पुरुषों के लिए होने, वर्णानुसार नामकरण, वैवाहिक पात्रता के लिए सिर्फ कन्या के दोष इंगित करने, व्यभिचार के दण्डों में वीभत्सता, स्त्री की साक्षी आदि विषय उठाते हुए प्रक्षिप्त श्लोकों के जनमानस पर व्यापक प्रभाव के फलस्वरूप दलित और स्त्री वर्ग पर अब भी जारी अत्याचारों को दूर करने हेतु परिचर्चा में सामने आ रही वस्तुस्थिति का प्रचार करने की आवश्यकता बताई।

मुख्य वक्ता डॉ. सुरेन्द्र कुमार ने पहले मनुस्मृति के मूल श्लोकों में नारी सम्मान दर्शाने वाले उद्धरण देते हुए बताया कि परिवार में सम्मान के अलावा पैतृक सम्पत्ति में अधिकार है, शिक्षा का अधिकार है, धर्मानुष्ठान का अधिकार है, पतिवरण का अधिकार है। नारी को सम्मान देने वाले मनु के मौलिक श्लोक प्रमाणित करते हैं कि भेदभाव और अत्याचार वाले श्लोक स्वार्थ के लिए प्रक्षिप्त किए गए हैं।

सत्र के अध्यक्ष आचार्य सत्यानन्दजी वेदवागीश ने ग्रंथों के भाष्य में व्याकरण के ज्ञान का महत्त्व उदाहरण सहित प्रतिपादित करते हुए सभी वक्ताओं, आयोजकों, श्रोताओं और कार्यकर्ताओं का धन्यवाद ज्ञापित किया।

अपने उद्‌बोधन में आर्यसमाज के वयोवृद्ध इतिहासज्ञ प्राध्यापक राजेन्द्र जिज्ञासु ने महर्षि दयानन्द और आर्य समाज द्वारा किए गए नारी उत्थान और दलितोद्धार के जीवन्त उदाहरण के रूप में दलित परिवारों से आर्यसमाज के संसर्ग में आकर पूज्य बनी अनेक विभूतियों को इंगित करते हुए कहा कि आर्यसमाज वैदिक व्यवस्था को कार्यरूप में परिणित करने वाली कर्मभूमि है।

कार्यक्रम में विद्वान् वक्ताओं, न्यास के श्री विजयसिंह भाटी, आर्य किशनलाल गहलोत, कोषाध्यक्ष जयसिंह पालड़ी, उपमंत्री यशपाल आर्य और मिशन के श्री यशवंत मेहता, श्री लक्ष्मण 'जिज्ञासु' एवं गौरव आर्य और कार्यक्रम संचालक आचार्य ओम्प्रकाश एवं पं. रामनिवास गुणग्राहक के साथ फोटोग्राफर श्री कैलाशचन्द्र आर्य का अभिनन्दन किया गया। अंत में पं. लेखराम वैदिक मिशन के श्री मेहता ने सभी का आभार व्यक्त किया।

आर्य किशनलाल गहलोत